वर्ष–1, अंक–12
इंटरनेट संस्करण : 63

पत्रिका गर्भनाल

ISSN 2249–5967
फरवरी 2012 ● ₹ 20

प्रवासी भारतीयों की मासिक पत्रिका

अपनी बात

भाषा, शिल्प, संस्कृति, औजारों पर आधारित प्रौद्योगिकी और कृषि मनुष्य की तरक्की के अनोखे औज़ार हैं. इनकी बदौलत ही उसे जीव-जगत एवं पर्यावरण को नियन्त्रित करने की क्षमता है. उसे अपनी इन अनोखी उपलब्धियों पर गर्व है. लेकिन मनुष्य के अनोखेपन के अँधेरे पहलू भी हैं, जिनमें पर्यावरण को नष्ट करने और अपनी ही प्रजाति के सदस्यों की सामूहिक हत्या करने के साथ मादक द्रव्यों का उपयोग करना शामिल है.

समस्या यह नहीं है कि हम एक बार इन लत डालने वाले जहरीले रसायनों का सेवन शुरू करने के बाद लगातार उन्हें लेते रहते हैं, बल्कि बड़ा रहस्य तो यह है कि आखिर हमें इनका सेवन शुरू करने की इच्छा या रुझान कहाँ से पैदा होती है. क्यों लोग व्यग्रतापूर्वक विभिन्न जहरों को लिया करते हैं. ऐसा लगता है कि हमारे अवचेतन में निहित कोई प्रोग्राम हमें ऐसे काम करने को प्रवृत्त करता है, जिसके हानिकारक होने के बारे में हम पहले से जानते होते हैं, लेकिन बावजूद इसके उस पर हमारा नियंत्रण नहीं रह पाता. यह कौन सा प्रोग्राम है?

स्वाभाविक रूप से यह कोई अकेली व्याख्या नहीं है. एक सिद्धान्त के अनुसार आदमी अपने आपको नुकसान पहुँचाने वाले मादक द्रव्यों का उपयोग अपने परिचितों का ध्यान अपनी ओर खींचने के लिए करता है. अलग-अलग समाजों में अलग-अलग वजहें होती हैं. उदाहरण के लिए कुछ लोग अपनी वर्जनाओं से उबरने के लिए पीते हैं. कई समुदायों में परम्परा के रूप में इसका चलन है. मादक द्रव्य की पसन्द भौगोलिक स्थितियों, सामाजिक वर्ग, आर्थिक वर्ग के अनुसार भी अलग-अलग होती है. एक दिलचस्प अवलोकन बताता है कि विश्व भर में अपेक्षाकृत विकसित समाजों में तम्बाकू के उपयोग में कमी आई है तथा अन्य मादक द्रव्यों का अनियंत्रित उपयोग समाजों के पिछड़े समूहों में अधिक होता है.

तम्बाकू के स्वास्थ्य पर नकारात्मक हानिकारक प्रभावों के आविष्कार के बाद सरकारों ने तम्बाकू एवं शराब के उत्पादों पर भारी शुल्क लगाना तय किया. इस शुल्क को 'दुराचार शुल्क' कहा जा सकता है. इसके साथ ही तम्बाकू एवं अन्य मादक पदार्थों के हानिकारक प्रभावों के विरुद्ध जनजागरण का अभियान भी तेज कर दिया गया. इसके सकारात्मक नतीजे भी दिख रहे हैं. यह अलग बात है कि राजस्व प्राप्ति कम होती जा रही है. प्रतिष्ठित पत्रिका The Economist में "The high cost of virtue" शीर्षक से ब्रिटेन में किए गए अध्ययन में बताया गया है कि गन्दी लत के खर्च का आधे से अधिक सीधे सरकारी खजाने में जाता है. ब्रिटेन के २०१०-२०११ वित्तीय वर्ष में इकट्ठा किए गए कुल टैक्स का करीब १० प्रतिशत अलकोहल, तम्बाकू, जुआ ईंधन और वाहन आबकारी कर से आया था. वाहन आबकारी कर मुख्यतः सबसे कम कुशल वाहनों से वसूले गए होते हैं. यह अध्ययन रेखांकित करता है कि दुराचार (मादक द्रव्यों का उपयोग एवं पर्यावरण को नष्ट करना) हमारी अर्थव्यवस्था की एक अभिन्न आवश्यकता बन गई है और इससे परहेज करने की कीमत चुकानी पड़ती है.

गन्दी लतों पर कर उगाही का लम्बा इतिहास है. ब्रिटिश पार्लियामेंट ने सन १६४३ ई. में ताज के खिलाफ अपने संघर्ष के लिए धन जुटाने के लिए पहली बार बियर और मांस पर लेवी लगाई थी. अलकोहल पर लेवी कायम रह गई है. अभी बियर के एक पिंट पर करीब ५३ पेनी का, एक बोतल शराब पर २.१८ पाउंड और एक बोतल व्हिस्की पर ८.१८ पाउंड का कर लगता है. तम्बाकू पर कर शुरू में आयातित विलासिता के रूप में लगाया गया था. आज सिगरेट पर शुल्क एक पैकेट सिगरेट की कुल कीमत का करीब तीन-चौथाई होता है. पर्यावरण के प्रदूषित होते जाने से भूमण्डलीय तापवृद्धि हो रही है. वाहनों के ईंधन के निकास-धुएँ भूमण्डलीय तापवृद्धि में सहायक होते हैं. ईंधन पर लगने वाला कर इसके खिलाफ एक कारगर अस्त्र हो सकता है. वैट सहित ये शुल्क पेट्रोल की कीमत के ६३ प्रतिशत होते हैं. सरकार दुराचार शुल्क में बढ़ोत्तरी कर स्थिति का मुकाबला करती है. लेकिन जब-जब करों में बढ़ोत्तरी होती है, लोगों में इसको नकारने की प्रवृत्ति को उकसावा मिलता है. काला बाजारी और विदेशों से तस्करी करने को बढ़ावा मिलता है. जुए के शुल्क की वसूली भी समान रूप से प्रभावित होती है. ब्रिटेन में करों से बचने के लिए जुए के अनेको कारोबारियों ने अपने धन्धे को कुछ हद तक विदेशों में स्थानान्तरित कर दिया है.

गंदी लतों के छोड़ने के लाभों से इनकार नहीं किया जा सकता. धूम्रपान अकाल मृत्यु एवं रोके जा सकने वाले रोगों का मुख्य कारण है. धूम्रपान से रोगग्रस्त होने में समय लगता है, जबकि शराबनोशी की केवल एक रात भी दुर्घटनाएँ एवं आपातकालीन अवस्थाएँ उत्पन्न कर सकती है. अधिक धीमी गति से मरने की सम्भावना तो रहती ही है. दुराचार के शुल्क अक्सर हथियार के रूप में त्रुटिपूर्ण होते हैं. अभी हमारे देश में तम्बाकू के उपयोग को रोकने के लिए प्रभावी कदम तत्परता से उठाए जा रहे हैं, जबकि शराब की नई-नई दुकानें घड़ल्ले से बढ़ रही हैं.

नैतिक दृष्टि से इन शुल्कों की वसूली में कमी काम के सन्तोषजनक रूप से होने का संकेत देता है. पर राजस्व की दृष्टि से घाटा तो घाटा ही है. बजट के लिए जिम्मेदार दफ्तर की दृष्टि में, राजस्व आय में कमी का अर्थ होगा कि आय के नए स्रोतों की तलाश करना. इसके लिए दूसरे शुल्कों में बढ़ोत्तरी करनी पड़ सकती है. गणित तो समझ में आ जाता है, लेकिन क्या यह समाधान सदाचारियों को शुल्कों से दबाया जाना नहीं होगा?

ypvsj@yahoo.ca

पत्रिका
गर्भनाल

वर्ष-1, अंक-12 (इंटरनेट संस्करण : 63)
फरवरी 2012

सम्पादकीय सलाहकार
डॉ. यतेन्द्र वार्षनी, कैनेडा

परामर्श मंडल
वेद मित्र, एम.बी.ई., यू.के.
डॉ. रवीन्द्र अग्निहोत्री, ऑस्ट्रेलिया
अनिल जनविजय, रूस
अजय भट्ट, बैंकाक
देवेश पंत, अमेरिका
उमेश ताम्बी, अमेरिका
आशा मोर, ट्रिनिडाड
भावना सक्सैना, सूरीनाम
डॉ. अनिल विद्यालंकार, भारत
डॉ. ओम विकास, भारत
गंगानन्द झा, भारत

सम्पादक
सुषमा शर्मा

तकनीकि सहयोग
डॉ. राजीव यादव, न्यूयार्क

आकल्पन सहयोग
डॉ. बृजेश तिवारी, लखनऊ

कम्पोजिंग
प्रताप परिहार

कानूनी सलाहकार
संजीव जायसवाल

सम्पर्क
डीएक्सई-23, मीनाल रेसीडेंसी,
जे.के. रोड, भोपाल-462023 (म.प्र.) भारत.
ईमेल : garbhanal@ymail.com

आवरण पेंटिंग
रामानंद शर्मा

प्रकाशित रचनाओं के विचार लेखकों के अपने हैं, जरूरी नहीं है कि सम्पादक इससे सहमत हों. विवाद की स्थिति में केवल भोपाल न्यायालय क्षेत्र ही रहेगा.

प्रकाशक, मुद्रक एवं स्वामी सुषमा शर्मा के लिए बॉक्स कारूगेटर्स एण्ड ऑफसेट प्रिंटर्स, 14-बी, आई सेक्टर, औद्योगिक क्षेत्र, गोविन्दपुरा, भोपाल द्वारा मुद्रित एवं डीएक्सई-23, मीनाल रेसीडेंसी, जे.के. रोड, भोपाल से प्रकाशित.

>> 10
आधी शुद्ध आधा बेशुद्ध

>> 13
उपकार करें, स्वस्थ रहें

>> 23
सोवियत-रूस में योग

>> 46
परायी प्यास का सफर

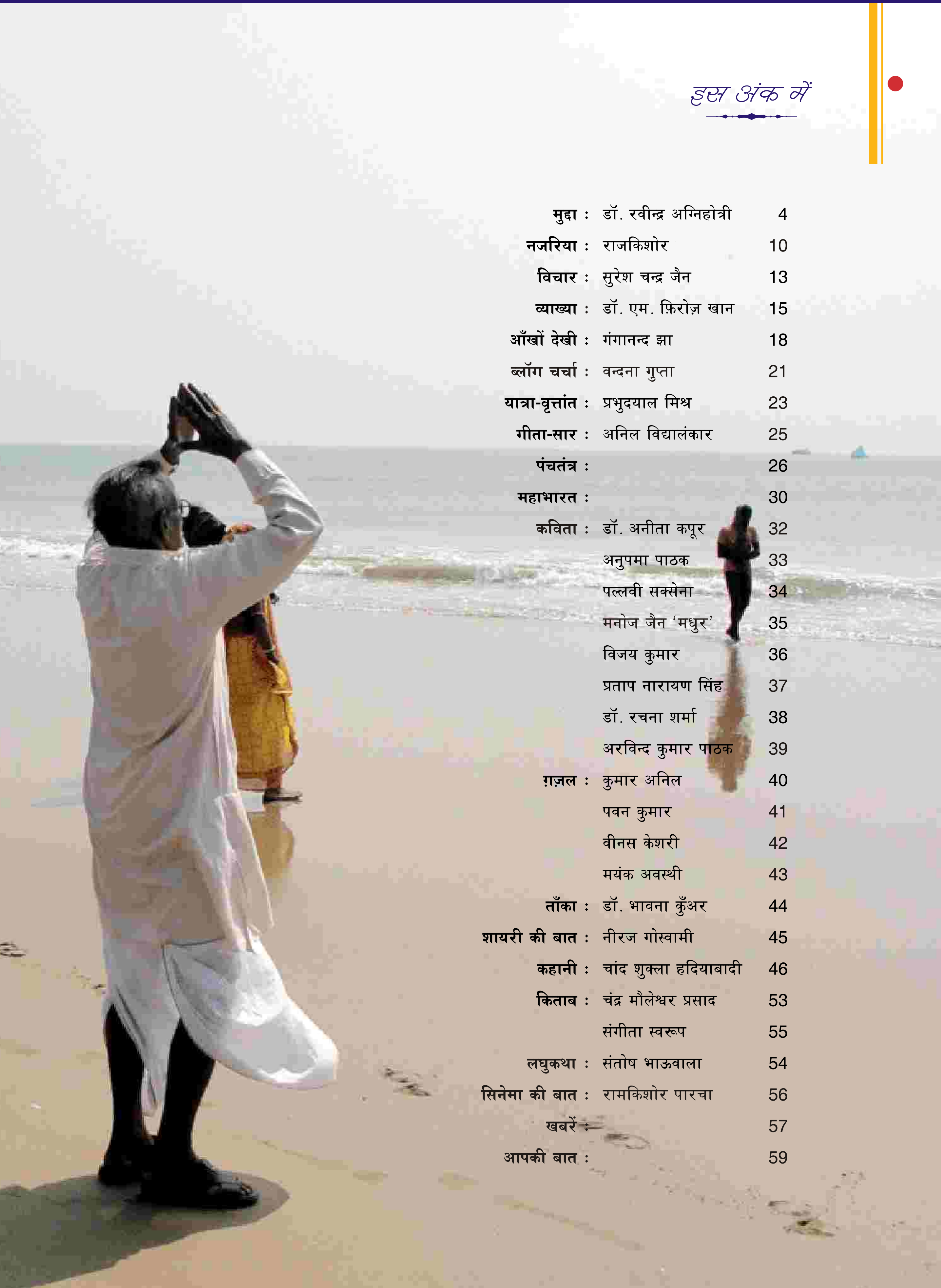

इस अंक में

मुद्दा :	डॉ. रवीन्द्र अग्निहोत्री	4
नजरिया :	राजकिशोर	10
विचार :	सुरेश चन्द्र जैन	13
व्याख्या :	डॉ. एम. फ़िरोज़ खान	15
आँखों देखी :	गंगानन्द झा	18
ब्लॉग चर्चा :	वन्दना गुप्ता	21
यात्रा-वृत्तांत :	प्रभुदयाल मिश्र	23
गीता-सार :	अनिल विद्यालंकार	25
पंचतंत्र :		26
महाभारत :		30
कविता :	डॉ. अनीता कपूर	32
	अनुपमा पाठक	33
	पल्लवी सक्सेना	34
	मनोज जैन 'मधुर'	35
	विजय कुमार	36
	प्रताप नारायण सिंह	37
	डॉ. रचना शर्मा	38
	अरविन्द कुमार पाठक	39
ग़ज़ल :	कुमार अनिल	40
	पवन कुमार	41
	वीनस केशरी	42
	मयंक अवस्थी	43
ताँका :	डॉ. भावना कुँअर	44
शायरी की बात :	नीरज गोस्वामी	45
कहानी :	चांद शुक्ला हदियाबादी	46
किताब :	चंद्र मौलेश्वर प्रसाद	53
	संगीता स्वरूप	55
लघुकथा :	संतोष भाऊवाला	54
सिनेमा की बात :	रामकिशोर पारचा	56
खबरें :		57
आपकी बात :		59

डॉ. रवीन्द्र अग्निहोत्री
सम्पर्क : १५, डोरसेटड्राइव, अल्फ्रेडटन, बेलारेट, विक्टोरिया ३३५० आस्ट्रेलिया
ईमेल : agnihotriravindra@yahoo.com

मुद्दा

मोसे छल किए जाय

हिंदी के साथ एक लम्बे समय से छल-कपट का व्यवहार किया जा रहा है. और अंग्रेजी शिक्षा के माध्यम से फैलाए कतिपय भ्रमों से इस व्यवहार को बल मिलता जा रहा है. 'राष्ट्रभाषा/राजभाषा' के रूप में हिंदी का ज़िक्र छिड़ते ही कुछ लोग देश में अनेक भाषाओं की चर्चा कुछ इस अंदाज़ में करने लगते हैं कि एक सूत्र में बांधने वाली अखिल भारतीय भाषा की संभावना ही धूमिल पड़ जाती है. आग में घी का काम करती है अंग्रेजी शिक्षा के माध्यम से फैलाई आर्य और द्रविड़ प्रजाति की संकल्पना और उनका काल्पनिक इतिहास.

यूरोपीय जातियों के आगमन से पहले के इतिहास से अनभिज्ञ लोग इस भ्रम का भी शिकार हो जाते हैं कि अंग्रेजों के आने के बाद ही पहली बार पूरे देश में एक भाषा का (अर्थात अंग्रेजी का) अध्ययन/ व्यवहार शुरू हुआ है. अतः वही सही अर्थ में अखिल भारतीय भाषा है. हमारी 'अपनी' कही जाने वाली कोई अखिल भारतीय भाषा न पहले थी, न अब है. वे भारत के भाषाई इतिहास में संस्कृत की भूमिका को एकदम भूल जाते हैं. इसीलिए हिंदी को भी ऐसी भाषा मान लेते हैं जो उत्तर भारत के एक भाग की भाषा है, जो देश की अन्य अनेक भाषाओं की भांति पिछले लगभग एक हज़ार साल में बनी है और राजकाज में जिसका व्यवहार कभी हुआ ही नहीं क्योंकि पिछले एक हज़ार साल में उत्तर भारत में

> *हिंदी को जब उत्तर भारत की भाषा बताया जाता है तो आशय यह होता है कि इसे शेष भारत, विशेष रूप से दक्षिण भारत में कोई नहीं जानता.*

मुसलमानों का शासन रहा और उनकी भाषा अरबी/फारसी/उर्दू रही. वे कहते हैं कि सांस्कृतिक जागरण काल (१९वीं शताब्दी) की शुरुआत बंगाल में हुई और वहीं के नेताओं ने इसे 'राष्ट्र भाषा' नाम दे दिया. दक्षिण भारत में तो इसका प्रचार करने का काम पिछली ही शताब्दी में महात्मा गाँधी ने शुरू किया.

पर वास्तविकता यह है कि न तो हिंदी का इतिहास केवल एक हज़ार वर्ष का है, न वह केवल उत्तर भारत की भाषा है. सुप्रसिद्ध भाषा वैज्ञानिक डॉ. हरदेव बाहरी के शब्दों में, 'हिंदी का इतिहास वस्तुतः वैदिक काल से आरम्भ होता है. उससे पहले इस आर्यभाषा का स्वरूप क्या था, यह सब कल्पना का विषय बन गया है. कोई लिखित प्रमाण नहीं मिलता. आर्य चाहे कहीं बाहर से आए हों, अथवा यहीं सप्त सिन्धु प्रदेश के मूल निवासी हों, यह निश्चित और निर्विवाद सत्य है कि वर्तमान हिंदी प्रदेश में आने से पहले उनकी भाषा वही थी जिसका साहित्यिक रूप ऋग्वेद में प्राप्त होता है. एक तरह से यह कहना ठीक होगा कि वैदिक भाषा ही प्राचीनतम हिंदी है.

इस भाषा के इतिहास का यह दुर्भाग्य है कि युग-युग में इसका नाम परिवर्तित होता रहा है, कभी वैदिक, कभी संस्कृत, कभी प्राकृत, कभी अपभ्रंश और अब हिंदी. (हिंदी - उद्‌भव, विकास और रूप; किताब महल, इलाहाबाद; अष्टम संस्करण १९८४; पृष्ठ १५).

पाठकों को यह लग सकता है कि वैदिक संस्कृत और हिंदी में तो ज़मीन- आसमान का अंतर है, पर ध्यान दीजिए कि हिब्रू, रूसी, चीनी, जर्मन, तमिल जैसी विश्व की जिन भाषाओं को बहुत पुराना बताया जाता है, उनके भी पुराने और वर्तमान रूपों में वैसा ही ज़मीन- आसमान का अंतर है, पर लोगों ने उनके नाम नहीं बदले. उनके परिवर्तित रूपों को प्राचीन, मध्यकालीन, आधुनिक आदि कहा गया जबकि हिंदी के सन्दर्भ में प्रत्येक युग की भाषा का नया नाम रखा जाता रहा. यही कारण है कि हिंदी के विकास के सन्दर्भ में ध्वनि, शब्द, अर्थ, व्याकरण आदि की चर्चा करते समय प्रायः सभी भाषा-वैज्ञानिक मूल स्रोत के रूप में संस्कृत की ओर देखते हैं. डॉ. बाहरी ने अपनी उक्त पुस्तक में हिंदी के विकास के अंतर्गत शब्द भण्डार की चर्चा में ऐसे शब्दों की लम्बी- लम्बी सूचियाँ दी हैं जो वैदिक वांग्मय से हिंदी में आए हैं. जैसे, यजुर्वेद से आए हुए 'क' अक्षर से आरम्भ होने वाले शब्द (उदाहरणार्थ - कक्षा, कंठ, कथा, कनिष्ठ, कर्ता, कलश, कल्याण, कवि, केश, क्रोध आदि) या ऐतरेय ब्राह्मण के 'अ' वर्ण से शुरू होने वाले कुछ शब्द (जैसे अकाल, अक्षर, अंक, अंग, अन्यत्र, अभिभूत, अन्यथा, अलंकार आदि) और अंत में लिखा है, 'वेद में इस प्रकार के हज़ारों शब्द हैं जो आज अक्षुण्ण रूप में हिंदी – कम से कम साहित्यिक हिंदी – की निधि हैं. संसार की किसी भाषा में ३-४ हज़ार वर्ष से चले आते हुए शब्द अविकृत रूप में इतनी बड़ी संख्या में नहीं मिलेंगे (पृष्ठ १३०-१३२).

> *जनतंत्र की रक्षा करने की ज़िम्मेदारी जनता की ही होती है. जनता की जागरूकता जहाँ राजनीति पर अंकुश का काम करती है वहीं उसकी गफलत मधुर थपकियाँ देकर सुलाने वाली लोरी बन जाती है. इसलिए एक ही सन्देश है 'तेरी गठरी में लागा चोर मुसाफिर जाग ज़रा'.*

ऋग्वेद का पहला ही मन्त्र है, 'अग्निमीडे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् होतारं रत्नधातमम्.' पाठक स्वयं देख सकते हैं कि इस मन्त्र में आए अग्नि, पुरोहित, यज्ञ, देव आदि शब्द आज भी प्रयोग में आ रहे हैं. अतः डॉ. बाहरी का यह कहना सर्वथा उचित है कि हिंदी का इतिहास केवल एक हज़ार साल से नहीं, हज़ारों साल पहले की वैदिक भाषा से शुरू होता है.

हिंदी को जब उत्तर भारत की भाषा बताया जाता है तो आशय यह होता है कि इसे शेष भारत, विशेष रूप से दक्षिण भारत में कोई नहीं जानता. प्रचारित यह भी किया जाता है कि दक्षिण में तो हिंदी का प्रचार महात्मा गाँधी ने स्वतन्त्रता आन्दोलन के दौरान ही शुरू किया. इसमें तो कोई संदेह नहीं कि पिछली शताब्दी में केवल दक्षिण में नहीं, पूरे भारत में हिंदी प्रचार का जितना काम महात्मा गाँधी ने किया उतना किसी ने नहीं किया. पर यह प्रचार किसी नई चीज़ का नहीं, अपनी पुरानी परम्परा के उद्धार के लिए था जिसे अंग्रेज़ी शासन और अंग्रेजी शिक्षा ने विच्छिन्न कर दिया था. यही कारण था कि जब उनके पास कोई व्यक्ति जाकर यह कहता था कि मैं भी देशसेवा करना चाहता हूँ, मुझे काम बताइये; तो उनका पहला प्रश्न यह होता था 'आपको हिंदी आती है?' उत्तर 'न' में मिलने पर वे कहा करते थे कि सबसे पहले हिंदी सीखिए. देश सेवा का यह सबसे पहला काम है.

गाँधी जी के लिए हिंदी उत्तर भारत की नहीं, पूरे देश की भाषा थी. पर महात्मा गांधी के अवतरण से पूर्व भी हिंदी अखिल भारतीय भाषा थी. लगभग पांच-छह शताब्दी पूर्व भक्ति आन्दोलन की शुरुआत दक्षिण में हुई तब यद्यपि जन-सामान्य से जुड़ने के लिए विभिन्न 'लोक भाषाओं' का भी व्यापक प्रयोग किया गया, पर इस आन्दोलन के केंद्र में हिंदी ही बनी रही और देवभाषा संस्कृत का प्रयोग शास्त्रीय चर्चा के लिए सुरक्षित हो गया. यह ध्यान देने योग्य है कि हिन्दुओं के जो दो प्रमुख सम्प्रदाय हैं - शैव और वैष्णव, उनमें शैव लोग भगवान शिव की पूजा करते हैं और शिव जी की नगरी है काशी जो हिंदी प्रदेश में है. वैष्णव लोग भगवान विष्णु के जिन अवतारों (राम और कृष्ण) की पूजा प्रमुख रूप से करते हैं, उनका सम्बन्ध अयोध्या और ब्रज भूमि से है और ये भी हिंदी प्रदेश में हैं. भक्तिकाल में तीर्थयात्रा, स्तुतिगान आदि को विशेष महत्व दिया गया अतः दोनों सम्प्रदायों के अनुयायी हिंदी प्रदेश की तीर्थ यात्रा करते रहे. हिंदी में भजन बनाते रहे, गाते रहे और हिंदी से जुड़े रहे. इस प्रकार भक्ति आन्दोलन के संतों ने हिंदी को अखिल भारतीय बनाए रखा और उसके अखिल भारतीय महत्व को स्वीकारते हुए ही उसका प्रयोग किया फिर चाहे वे महाराष्ट्र के नामदेव हों या असम के शंकरदेव.

रही बात राजभाषा के रूप में हिंदी के प्रयोग की तो

इसके लिए जयचंद विद्यालंकार का 'भारतवर्ष का इतिहास' (दो खंड) या डॉ. रामबाबू शर्मा का 'बारहवीं सदी से राजकाज में हिंदी' जैसा कोई ग्रन्थ पढ़ लीजिए. स्पष्ट हो जाएगा कि महमूद ग़ज़नवी (९९७ ईसवी) से लेकर गुलाम वंश, खिलजी वंश, तुगलक वंश, मुग़ल वंश - सभी के शासनकाल में हिंदी ही राजभाषा रही. फारसी का प्रयोग मुग़लकाल ही में ही हुआ और वह भी सीमित कामों के लिए. महमूद गज़नवी के समय तो संस्कृत का भी प्रयोग किया गया. उसके सिक्कों पर एक ओर अरबी में कलमा अंकित है और दूसरी ओर संस्कृत में 'अव्यक्त ब्रह्म एकं मुहम्मद अवतार नृपति महमूद अयं टंको महमूद्पुरे घट्टे जिनायन संवत....' अंकित है. (सुनीति कुमार चाटुर्ज्या, 'भारतीय आर्य भाषा और हिंदी', नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, पांचवां संस्करण १९८९, पृष्ठ १९३-१९४).

हाँ, यह सही है कि हिंदी को 'राष्ट्र भाषा' की संज्ञा लगभग डेढ़ सौ वर्ष पूर्व के सांस्कृतिक जागरण काल के उन नेताओं ने दी जिन्हें आज की शब्दावली में 'अहिंदीभाषी' कहा जाएगा. संस्कृत के प्रकांड विद्वान होते हुए भी गुजराती भाषी स्वामी दयानंद जैसे महापुरुष ने तो हिंदी को पूरे देश के सर्व साधारण की भाषा मानकर अपने कामकाज की भाषा बनाया. उन्होंने अपना विशाल साहित्य हिंदी में ही लिखा और गुजरात, महाराष्ट्र जैसे प्रदेशों में जाने पर भी व्याख्यान हिंदी ही में दिए. वे कहा करते थे, 'हिंदी के द्वारा सारे भारत को एक सूत्र में पिरोया जा सकता है.' और इसीलिए उन्होंने हिंदी प्रचार अपना लक्ष्य बना लिया. जिस दक्षिण भारत को आज 'हिंदी विरोध का गढ़' माना जाता है, वहां अंग्रेज़ी शासन के जमने से पूर्व तक हिंदी की क्या स्थिति थी, इसके दो-तीन उदाहरण ही पर्याप्त होंगे.

तंजौर के शाहजी महाराज ने (१६८४-१७१२) जिन्हें 'आन्ध्र भोज' कहा जाता है, बुन्देलखंडी मिश्रित खड़ी बोली में 'विश्वातीत विलास नाटक', 'राघवन्सीधर विलास नाटक' जैसा साहित्य लिखा. केरल के स्वाति तिरुनाल रविवर्मा (१८१३-१८४९) ने ब्रजभाषा में चालीस से भी अधिक भजनों की रचना की. १९वीं शताब्दी में भारतेन्दु हरिश्चंद्र के समकालीन मछलीपट्टणम के पं. पुरुषोत्तम कवि नादेल्ल ने हिंदी में ३२ नाटक लिखे जिनका वहां १५ वर्षों तक मंचन होता रहा. यदि वहां हिंदी अज्ञात होती तो क्या हिंदी नाटकों का मंचन संभव था?

अंग्रेजी शिक्षा के प्रसार से पूर्व सर टामस मुनरो ने सर्वेक्षण (१८२२-१८२६) करके बताया कि कोयम्बतूर (अर्थात तमिलनाडु) राज्य में लगभग ४० प्रतिशत विद्यालय हिंदी माध्यम के, इतने ही तमिल माध्यम के और शेष अन्य भाषाओं के माध्यम से शिक्षा दे रहे थे (विस्तार से पढ़ें, धर्म पाल, 'द ब्यूटीफुल ट्री' बिब्लिया इम्पेक्स प्रा. लि. नई दिल्ली).

"विलियम जोन्स ने भारतवासियों को पहली बार आर्य और द्रविड़ों में बांटकर पार्थक्य की विषबेल बो दी. हिंदी के प्रति फैला वर्तमान द्वेष इसी विषबेल का फल है जिसे अंग्रेजी शिक्षा ने और विषैला बनाया."

स्पष्ट है कि अंग्रेजों के पैर जमाने से पहले हिंदी अखिल भारतीय भाषा के रूप में समादृत थी.

इस देश में भाषा सम्बन्धी विभिन्न विवादों की शुरुआत सर विलियम जोन्स (१७४६-१७९४) से मानी जा सकती है. वे कलकत्ता में सुप्रीम कोर्ट के जज बनकर आए थे. उन्होंने जब संस्कृत, शास्त्रीय ग्रीक और लैटिन में अद्भुत समानताएं देखीं तो अपनी The Sanscrit Language (१७८६) पुस्तक में उनके एक ही उद्गम की कल्पना करके उन्हें सहोदरा बताया. सामान्य देशवासी तो उनके इस कथन से अभिभूत हो गए और यह भूल गए कि सभ्यता-संस्कृति में अपने को सर्वोपरि मानने के यूरोपीय जातियों के दंभ के कारण उन्होंने संस्कृत की उम्र घटा दी है क्योंकि ग्रीक का जो प्राचीनतम लिखित प्रमाण मिलता है वह आठवीं शताब्दी ईसवी पूर्व का है और लैटिन का छठी ईसवी पूर्व का, जबकि ऋग्वेद (यूरोपीय विद्वानों के ही अनुसार) इनसे लगभग दो हज़ार वर्ष पुराना है. अतः वैदिक संस्कृत को ग्रीक-लैटिन की 'जननी' ही कहा जा सकता है, 'सहोदरा' नहीं.

एक और भूल विलियम जोन्स से हुई जिसके दुष्परिणाम ने भारतीय इतिहास को विकृत कर दिया. जिस प्रकार इंग्लैण्ड में लगभग ५०० ईसवी पूर्व कैल्ट जाति के लोग आए (कैल्ट और उनसे पराजित लोगों की मिली जुली संतान को ही 'ब्रिटन्स' कहते हैं) और बाद में ट्युटोनिक जाति के ऐंग्लो सैक्सन लोगों ने सम्पूर्ण इंग्लैण्ड को जीत लिया (ये ही लोग आगे चलकर 'इंग्लिश' कहलाए). कुछ वैसी ही 'कल्पना' उन्होंने बिना किसी ऐतिहासिक प्रमाण के भारत के सम्बन्ध में कर डाली. उन्होंने भारतवासियों को पहली बार आर्य और द्रविड़ों में बांटकर पार्थक्य की विषबेल बो दी. हिंदी के प्रति फैला वर्तमान द्वेष इसी विषबेल का फल है जिसे अंग्रेजी शिक्षा ने और विषैला बनाया. सांस्कृतिक जागरण काल के नेताओं ने और बाद में महात्मा गांधी जैसे स्वाधीनता संग्राम के नेताओं ने इसी विष को दूर करने का प्रयास किया जिसका एक साधन हिंदी प्रचार भी था.

पर हिंदी के सम्बन्ध में संविधान सभा के सभी सदस्य सांस्कृतिक काल के नेताओं और महात्मा गाँधी जैसे नेताओं से सहमत नहीं थे. एक विशाल वर्ग अवश्य महात्मा गाँधी के विचारों के अनुरूप हिंदी का पक्षधर था और चाहता था कि तुरंत हिंदी को राजभाषा बनाया जाए. उनके सामने गाँधी जी का बीबीसी के संवाददाता को दिया वह सन्देश था, 'दुनिया से कह दो, गाँधी अंग्रेजी भूल गया.' क्योंकि गाँधी को आज़ादी की पहली प्रतीति भाषा की मुक्ति में हो रही थी. पर एक दूसरा वर्ग ऐसे लोगों का भी था जो अंग्रेजी के समर्थक थे और उसे ही राजभाषा बनाए रखना चाहते थे. यह वर्ग स्पष्ट रूप से हिंदी का विरोध कर रहा था. इस वर्ग के विपरीत एक तीसरा वर्ग उन लोगों का था जो गाँधी जी के व्यक्तित्व से तो प्रभावित थे, पर उनके विचारों से सहमत नहीं थे. ये लोग अपने को हिंदी का विरोधी नहीं कहते थे, पर उसे तुरंत लागू करना भी नहीं चाहते थे. नेहरू जी इसी वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं. तभी तो उन्होंने आज़ादी का स्वागत करने के लिए अपना भाषण अपने हाथ से अंग्रेजी में लिखा 'Tryst with Destiny.'

> *भाषा को संपन्न करने का काम जिन्हें सौंपा था उन्होंने तो अपनी ओर से भाषा को संपन्न बना दिया, पर जिन्हें उस सम्पन्नता का लाभ उठाना है वे उसका लाभ उठाने में अपने को असमर्थ पा रहे हैं.*

संविधान सभा में निर्णय यदि बहुमत के आधार पर किया जाता तो वह निश्चित रूप से हिंदी के पक्ष में होता, पर संविधान सभा ने प्रारम्भ में ही यह निश्चय कर लिया था कि सभी निर्णय सर्व सम्मति या लगभग पूर्ण सहमति के आधार पर ही किए जाएंगे, बहुमत के आधार पर नहीं (विस्तार से पढ़ें, १. ग्रेन्विल आस्टिन, द इंडियन कांस्टीट्युशन - कार्नर स्टोन ऑफ़ ए नेशन; बम्बई : आक्सफर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, १९७२; विशेष रूप से 'इंडियाज ओरिजिनल कांट्रीब्यूशन : डिसीजन मेकिंग बाई कन्सेन्सस, पृष्ठ ३११-३१४ ; २. कांस्टीट्युशन असेम्बली डिबेटस, वाल्युम २, पृष्ठ ३२९९). इसलिए सदस्यों के मतभेद को देखते हुए एक समझौता कराया गया जिसके अनुसार राजभाषा हिंदी, लिपि देवनागरी, और अंकों के लिए भारतीय अंकों का अंतर-राष्ट्रीय रूप स्वीकार तो किया, पर इस निश्चय का अनुपालन १५ वर्ष के लिए स्थगित कर दिया. कहने को हिंदी का नाम 'राजभाषा', पर न राज न ताज, १५ वर्ष का वनवास और सिंहासन पर अंग्रेजी का ठाट. छल करने वालों को इतने से ही संतोष नहीं हुआ. अतः एक व्यवस्था यह भी कर ली कि यदि संसद चाहे तो इस अवधि को और बढ़ा सकती है. यदि संसद के विवेक पर ही भरोसा करना था तो १५ वर्ष का वनवास देने के बाद ही क्यों? व्यवस्था यह भी तो की जा सकती थी कि अंग्रेजी के स्थान पर हिंदी का प्रयोग कब शुरू किया जाए – इसका निर्णय संसद करे. या फिर सभा ने राजभाषा आयोग के माध्यम से जो विश्वास देश की विभिन्न भाषाओं के भाषाविदों पर जताया था, उन्हीं भाषाविदों को यह प्रश्न हल करने का दायित्व सौंप देते. पर तब छल अधूरा रहता न!

१५ वर्ष की अवधि के सम्बन्ध में नेहरू जी का एक विचित्र सपना था और वह यह कि अगर अभी अंग्रेजी का प्रयोग जारी रखा जाए और १५ वर्ष बाद हिंदी को राजभाषा बनाया जाए तो अंग्रेजी इस देश से स्वतः गायब हो जायेगी (देखें, राबर्ट मैकक्रम, विलियम क्रेन और राबर्ट मैकलीन, द स्टोरी ऑफ़ इंग्लिश ; लन्दन : फेबर एंड फेबर बीबीसी पब्लिकेशन्स; १९८६, पृ. ३३३). सपने तो सपने ही होते हैं, उनका वास्तविकता से क्या सम्बन्ध? १५ वर्ष की अवधि के लिए सबसे बड़ा तर्क यह दिया गया कि हिंदी अभी राजकाज के लिए सक्षम नहीं है. उसे संपन्न बनाने की आवश्यकता है. यह फिर एक छल था. हर कोई जानता है कि भाषा प्रयोग करने से ही संपन्न बनती है, प्रयोग स्थगित करने से नहीं. पानी में उतरने के बाद ही तैरना आता है, अलग से नहीं. भाषा के प्रयोक्ता ही भाषा को संपन्न बनाते हैं, दूसरे लोग नहीं. पर यहाँ भाषा को संपन्न करने का काम औरों को सौंपा गया. इसका परिणाम आप देख ही रहे हैं. भाषा को संपन्न करने का काम जिन्हें सौंपा था उन्होंने तो अपनी ओर से भाषा को संपन्न बना दिया, पर जिन्हें उस सम्पन्नता का लाभ उठाना है वे उसका लाभ उठाने में अपने को असमर्थ पा रहे हैं.

संविधान सभा ने राजभाषा के रूप में हिंदी का विकास करने का एक आदेश भी दिया और उसे कार्यान्वित करने की शुरुआत उसने तीन दिन बाद ही एक प्रस्ताव द्वारा अध्यक्ष महोदय को यह दायित्व सौंपकर करा भी दी कि वे संविधान का हिंदी अनुवाद कराकर २६ जनवरी १९५० तक, और फिर यथाशीघ्र अन्य भारतीय भाषाओं में भी, प्रकाशित कराएं. इस कार्य के लिए अध्यक्ष डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने एक 'भाषा विशेषज्ञ सम्मेलन' बुलाया जिसमें संविधान की आठवीं अनुसूची में दी हुई सभी भाषाओं के ४१ विद्वान प्रतिनिधिस्वरूप सम्मिलित हुए. इन विद्वानों ने यह निश्चय किया कि जहाँ तक संभव हो, हिंदी अनुवाद में ऐसे ही पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग किया जाए जो प्रायः सर्वत्र प्रयुक्त होते हों ताकि उन्हीं शब्दों का प्रयोग विभिन्न भारतीय भाषाओं में तैयार होने वाले संविधान के अनुवादों में किया जा सके. अतः भाषा-विशेषज्ञों ने संविधान द्वारा निर्दिष्ट नीति का पालन करते हुए (अर्थात् मुख्यतया संस्कृत से और गौणतः

मुद्दा

अन्य भाषाओं से शब्द लेकर) संविधान में प्रयुक्त पारिभाषिक शब्दों का 'अंग्रेजी-हिंदी कोश' तैयार किया. फिर इन्हीं में से पांच विद्वानों (सर्वश्री मोटुरी सत्यनारायण, जयचंद विद्यालंकार, राहुल सांकृत्यायन, यशवंत आर दाते और डॉ. सुनीति कुमार चटर्जी) को लेकर 'विशेषज्ञ अनुवाद समिति' बनाई. इस समिति ने अनुवाद तैयार करने में इन्हीं शब्दों का प्रयोग किया. संविधान के हिंदी अनुवाद के प्राक्कथन में इस पृष्ठभूमि का उल्लेख करते हुए अध्यक्ष डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने लिखा है, 'संविधान के इस अनुवाद में प्रयुक्त कई शब्द, संभव है, कुछ लोगों को फिलहाल बिलकुल नए से प्रतीत हों, पर इस सम्बन्ध में यह याद रखना चाहिए कि ये शब्द भारत की अधिकांश भाषाओं के प्रतिनिधियों को स्वीकार्य हैं और इसलिए देश के अधिकांश लोगों को या तो अभी या निकट भविष्य में अवश्य बोधगम्य हो जाएंगे.' ध्यान देने योग्य बात यह है कि ये सभी काम लगभग चार महीने में पूरे हो गए. कहाँ १५ वर्ष का स्थगन, कहाँ चार महीने में भाषा विशेषज्ञ सम्मेलन का आयोजन, महत्वपूर्ण निर्णयों का संकलन, शब्द कोश का निर्माण, संविधान का अनुवाद और उसका प्रकाशन भी. इसीलिए कहा गया है कि जहाँ चाह है वहां राह है.

यह देखकर दुःख होता है कि संविधान सभा में शुरू से ही हिंदी के साथ छल-कपट किया गया. कैसे, सो समझने के लिए शुरू की ही एक घटना देखिए. संविधान सभा बन गई थी, पर उसके संचालन के नियम नहीं बने थे, न अध्यक्ष चुना गया था. अतः गवर्नर जनरल ने पटना के प्रसिद्ध बैरिस्टर सच्चिदानंद सिन्हा को वरिष्ठता के आधार पर अस्थायी अध्यक्ष बना दिया. आचार्य कृपलानी ने सभा की कार्यप्रणाली की नियमावली (Procedure Committee) बनाने से संबंधित प्रस्ताव रखा. जिस पर संशोधन प्रस्तुत करते हुए श्री रघुनाथ विनायक धुलेकर (मूलतः महाराष्ट्र के निवासी, कलकत्ता विश्वविद्यालय से अंग्रेजी में एम.ए., एलएलबी, एडवोकेट, झांसी के वकील, बाद में उत्तर प्रदेश विधान परिषद के अध्यक्ष) ने हिंदी में प्रस्ताव रखा कि सभा की सारी कार्यवाही हिंदी में हो और नियमावली मूलरूप से हिंदी में बनाई जाए, बाद में उसका अंग्रेजी में अनुवाद हो. जैसे ही उन्होंने बोलना शुरू किया, सभा में ऐसा हंगामा मचा मानों बर्र के छत्ते को छेड़ दिया हो. ज़रा ध्यान दीजिए यह 'स्वतंत्र' देश का संविधान बनाने के लिए जनता के अंग्रेजी-दां प्रतिनिधियों की सभा थी; पर हिंदी के नाम पर उनकी प्रतिक्रिया देखकर अंग्रेजी शासन के दौरान १८६४ में पहली बार आयोजित देश की ६०० रियासतों के राजाओं-नवाबों की सभा की अनायास याद आ जाती है जिसका संचालन हिंदी में किया गया और जिसे तत्कालीन गवर्नर जनरल एवं वायसराय सर जान लारेंस ने हिंदी में संबोधित किया (देखें, मैकमिलन्स जनरल स्टडीज़, दिल्ली : मैकमिलन्स इंडिया लिमिटेड, १९८८; पृष्ठ ए-१४७). हिंदी की बात सुनकर नेहरूजी भी धुलेकरजी को चुप कराने लगे तो उन्होंने झिड़क दिया. उधर अध्यक्ष ने भी धुलेकरजी से बैठ जाने के लिए कहा, पर वे अपनी बात पूरी करके ही बैठे. तब नेहरू जी उनके पास आए. पहले तो उन्होंने धुलेकरजी को डांटने की कोशिश की, पर उनका रुख देखकर धीरे से कान में बोले, तुम्हारा संशोधन पास हो जाएगा, पर तुम अब कुछ बोलना मत. इसके बाद नियमावली के बारे में अन्य भी संशोधन पेश किए गए. इस चर्चा से उकताकर जब अनेक सदस्य बाहर चाय पीने या गप्पें मारने के लिए चले गए और साढ़े तीन सौ में से लगभग ५०-६० लोग ही सभा में रह गए तब नेहरू जी ने अध्यक्ष से कहा कि सब संशोधन अलग-अलग न पढ़कर इकट्ठे वोटिंग करा लीजिए. तुरंत उपस्थित सदस्यों ने 'यस' कह दिया. इस प्रकार कहने को धुलेकरजी का भी प्रस्ताव पास हो गया. अब यह दूसरी बात है कि सभा में केवल अंग्रेजी के आशुलिपिक बैठे थे, अतः न तो धुलेकरजी की पूरी बात नोट की गई और न उस पर कभी अमल हुआ. पाठक ही तय करें कि इसे नेहरू जी की राजनीतिक सूझ-बूझ कहें या स्वतंत्र देश की आधारशिला रखने वाली संविधान सभा में हिंदी को स्थापित करने के गंभीर प्रयास को फूंक से उड़ा देने की चाल?

> 'जो जहाँ पर हो रहा सो हो रहा/यदि वही हमने कहा तो क्या कहा/किन्तु होना चाहिए कब क्या कहाँ/ व्यक्त करती है कला ही यह यहाँ' राष्ट्रकवि गुप्त जी के इस आदर्श को पत्रकारों ने अब अतीत की चीज़ बना दिया है.

आज़ादी के बाद से हिंदी के साथ ऐसा ही छल-कपट का व्यवहार होता रहा है. १५ वर्ष के बाद भी अंग्रेजी का प्रयोग जारी रखने के लिए बनाया गया राजभाषा अधिनियम भी इसी का उदाहरण है जिसने भविष्य में हिंदी के राजभाषा बनने के सारे रास्ते यह कहकर बंद कर दिए हैं कि जब तक 'सभी राज्य' हिंदी लागू करने के लिए सहमत नहीं हो जाते तब तक हिंदी को राजभाषा नहीं बनाया जाएगा. न नौ मन तेल होगा न राधा नाचेगी.

रही सही कसर सरकार का राजभाषा विभाग पूरी कर देता है. इस विभाग द्वारा हाल ही में जारी किया एक परिपत्र इसका ज्वलंत उदाहरण है. परिपत्र के अनुसार राजभाषा विभाग की निगाह में भोजन, क्षेत्र, छात्र, परिसर, नियमित, आवेदन, महाविद्यालय जैसे तमाम शब्द जो पीढ़ी दर पीढ़ी समाज में प्रचलित थे, वे आज एकाएक 'कठिन' 'टंग

मल्टीनेशनल कंपनियों ने मीडिया पर दबाव डाला कि अंग्रेजी मिश्रित हिंदी का प्रयोग करे तो उसे विज्ञापन दिए जाएंगे. नतीजा सामने है. अब हिंदी के समाचारपत्र हों या समाचार चैनल, उनकी भाषा 'हिंगलिश' हो गई है. प्रधान मंत्री 'पीएम' और मुख्य मंत्री 'सीएम' बन गए हैं.

टिवस्टर' 'अबोधगम्य' हो गए हैं. इसलिए उसने सुझाव दिया है कि इनके स्थान पर क्रमशः लंच, एरिया, स्टुडेंट, कैम्पस, रेगुलर, अप्लाई, कालेज आदि का प्रयोग करो. यह परिपत्र तो अंग्रेजों की नीति 'Languages should be killed with kindness' का ही विस्तार प्रतीत होता है.

मैं याद करने की कोशिश कर रहा हूँ कि राजभाषा कक्ष/विभाग ने (इसे विभाग २६ जून १९७५ को बनाया गया था जिस दिन आपातकाल घोषित किया गया था) क्या कभी 'शुद्ध हिंदी' का प्रयोग करने का भी कोई आदेश जारी किया? मुझे तो राजभाषा विभाग द्वारा प्रचारित वही वाक्य याद आता है कि 'बोलते या लिखते समय शब्दों के लिए अटकिए नहीं. आपको जो शब्द याद आए, उसी का प्रयोग करें'. सरल, बोधगम्य, सुपरिचित शब्दों का प्रयोग करने के ऐसे स्पष्ट अनुदेश के बाद भी अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग करने का परिपत्र जारी करने की क्या आवश्यकता पड़ गई? संविधान ने तो राजभाषा हिंदी के लिए 'मुख्यतया संस्कृत से और गौणतः अन्य भाषाओं से' शब्द लेने का आदेश दिया था; और संविधान के इस प्रावधान में अभी तक कोई संशोधन किया नहीं गया है, फिर राजभाषा विभाग उस नीति का उल्लंघन कैसे कर रहा है? संविधान सर्वोपरि है या राजभाषा विभाग?

प्रश्न यह भी है कि राजभाषा विभाग की भूमिका क्या है? संविधान के निर्णय को कार्यान्वित करने की दृष्टि से सरकार ने पारिभाषिक शब्दावली का विकास करने वाले अकेडमिक काम के लिए १९५० में एक अधिकृत अभिकरण (authorised agency) बनाया जिसे उस समय वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली बोर्ड नाम दिया था, बाद में कार्य की गुरुता को देखते हुए १९६० में इसे 'आयोग' का रूप दे दिया. यह आयोग अब तक प्रशासन के साथ-साथ विभिन्न विषयों से संबंधित लगभग छह लाख पारिभाषिक शब्द बना चुका है जो अब कंप्यूटर पर भी उपलब्ध हैं. आयोग 'प्रशासन शब्दावली' १९६८ से प्रकाशित भी करता आ रहा है और अब तक उसके अनेक संस्करण निकल चुके हैं. राजभाषा विभाग का काम तो सरकारी कामकाज में आयोग की बनाई शब्दावली का प्रयोग सुनिश्चित करना और प्रगति की निगरानी करना है अर्थात उसका काम प्रशासनिक है, शब्दावली विकसित करना नहीं. मेरा मानना है कि इसने शब्दावली के सम्बन्ध में आदेश जारी करके सरकार के बनाए अधिकृत अभिकरण (वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग) की उपेक्षा की है और अपने कार्यक्षेत्र का उल्लंघन किया है.

वस्तुतः परदे के पीछे की कहानी कुछ और ही है. जब से उदारीकरण-भूमंडलीकरण का युग शुरू हुआ है, हमारी नकेल किन्हीं और हाथों में पहुँच गई है. पहले मल्टीनेशनल कंपनियों ने मीडिया पर दबाव डाला कि अंग्रेजी मिश्रित हिंदी का प्रयोग करे तो उसे विज्ञापन दिए जाएंगे. नतीजा सामने है. अब हिंदी के समाचारपत्र हों या समाचार चैनल, उनकी भाषा 'हिंगलिश' हो गई है. प्रधान मंत्री 'पीएम' और मुख्य मंत्री 'सीएम' बन गए हैं. हिंदी के अनेक समाचारपत्रों ने तो अपने को मानों अंग्रेजी के भावी पाठकों की नर्सरी ही बना दिया है. न्यू इयर बने सक्सेस इयर, रिसर्च एंड डेवेलपमेंट कैरियर का ब्रेकथ्रू, बैंक एक कामन एग्जाम के जरिये कैंडिडेट्स का चयन कर रहे हैं, यह हिंदी के एक प्रमुख समाचार पत्र दैनिक जागरण (४ जनवरी २०१२) की भाषा है. लोग अंग्रेजी शब्दों का ही प्रयोग अपनी बोलचाल में करने लगे हैं – यह कहकर पत्रकारों ने 'शिक्षक' वाली अपनी भूमिका को तिलांजलि दे दी है. 'जो जहाँ पर हो रहा सो हो रहा/यदि वही हमने कहा तो क्या कहा/किन्तु होना चाहिए कब क्या कहाँ/ व्यक्त करती है कला ही यह यहाँ' राष्ट्रकवि गुप्त जी के इस आदर्श को पत्रकारों ने अब अतीत की चीज़ बना दिया है. इधर सरकार पर और दबाव डालने के लिए विश्व व्यापार संगठन मौजूद है जो बार-बार कहता आ रहा है कि "The role of government's organisations should be increased in promotion of English". कुछ समय पहले जब "Knowledge Commission" (ज्ञान आयोग) के अध्यक्ष सैम पित्रोदा ने सरकार को यह सुझाव दिया था कि पूरे देश में अंग्रेजी की पढ़ाई कक्षा एक से शुरू करनी चाहिए - उसके पीछे भी ये ही कारण थे. सर्व शिक्षा अभियान (Education for all) के लिए विश्व बैंक जो डालर दे रहा है उसका वास्तविक एजेंडा है English for all.

देश में जनतंत्र है और जनतंत्र की रक्षा करने की ज़िम्मेदारी जनता की ही होती है. जनता की जागरूकता जहाँ राजनीति पर अंकुश का काम करती है वहीं उसकी गफलत मधुर थपकियाँ देकर सुलाने वाली लोरी बन जाती है. इसलिए एक ही सन्देश है 'तेरी गठरी में लागा चोर मुसाफिर जाग ज़रा'.■

राजकिशोर

राजनीति में रुचि थी, लेकिन पत्रकारिता और साहित्य में आ गये. अब फिर राजनीति में लौटना चाहते हैं, लेकिन परंपरागत राजनीति में नहीं. सोचते हैं कि क्या मार्क्स की राजनीति गांधी की शैली में नहीं की जा सकती. एक व्यापक आंदोलन छेड़ने का पक्का इरादा रखते हैं. उसके लिए साथियों की तलाश है. आजकल इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइंसेज, नई दिल्ली में वरिष्ठ फ़ेलो हैं. साथ-साथ लेखन और पत्रकारिता भी जारी है. रविवार, परिवर्तन और नवभारत टाइम्स में वरिष्ठ सहायक सम्पादक के तौर पर काम किया. कई चर्चित पुस्तकों के लेखक. ताजा कृति : उपन्यास 'तुम्हारा सुख'.

सम्पर्क : ५३, एक्सप्रेस अपार्टमेंटस, मयूर कुंज, दिल्ली-११००९६ ईमेल : truthonly@gmail.com

नज़रिया

आधी शुद्ध आधा बेशुद्ध

एक लड़का था. मध्य वर्ग में भी जो मध्य वर्ग होता है, उसी वर्ग का. जब वह बड़ा होने लगा, तो अंग्रेजी माध्यम के एक नजदीकी स्कूल में उसका दाखिला करा दिया गया. स्कूल में फीस तगड़ी ली जाती थी, पर वह सांस्कृतिक मुफलिसी का शिकार था. वहां न अंग्रेजी अच्छी पढ़ाई जाती थी न हिन्दी. लड़के में प्रतिभा थी. एक शाम, जब नीम के पत्ते गिरने लगे और मन की उदासी बढ़ने लगी, उसकी कवि-प्रतिभा फूट पड़ी. उसने एक छोटी-सी कविता लिखी :

कितने अच्छे हैं मेरे पेरेंटस
उन्होंने दिया मुझे बर्थ
मुसकाया स्काइ नाच उठी अर्थ
नाउ आइ एम टेन एंड वन
अपने पेरेंटस का प्राउड सन
वे हैं मेरे बेस्ट फ्रेंड
जानते हैं लेटेस्ट ट्रेंड
उनकी कृपा से एव्रीथिंग आइ गॉट
जब मैं पूरा ग्रो कर जाऊंगा
आइ विल अर्न ए लॉट

अपनी कविता को कॉपी पर सजावटी अक्षरों में उतार कर वह सातवें आसमान की ओर उड़ चला. रात भर आधा सोता आधा जागता रहा. अगले दिन उसने अपनी अंग्रेजी शिक्षिका को अपनी कविता दिखाई. वह हंसने लगी. फिर संजीदा हो कर बोली, बेटे, तुम्हें पूरी पोएम इंग्लिश में ही राइट करनी चाहिए थी. शिक्षिका ने पहली पंक्ति को इस तरह सुधारा - हाउ ग्रेट आर माइ पेरेंटस और लड़के से कहा, बाकी तुम देख लेना. वहां से निराश हो कर लड़का हिन्दी शिक्षक के पास गया. वह भी हंसने लगा. बोला, अटेम्प्ट तो अच्छा है, पर तुम्हें पूरी कविता को हिन्दी में ही कंपोज करना चाहिए था. हिन्दी शिक्षक ने पहली पंक्ति को इस तरह सुधारा - कितने भले हैं मेरे माता-पिता.

> मुद्दा साधु भाषा और जन भाषा का नहीं है. दोनों में हमेशा अंतर रहा है. मुद्दा सिद्धांत और व्यवहार का भी नहीं है. दोनों में फर्क जितना ज्यादा हो, जीवन उतना ही प्रदूषित होता है.

वहां से भी दुखी हो कर लड़का टिफिन की घंटी के बाद ही, पेट दर्द का बहाना कर, घर लौट आया. अब वह अपनी कविता को कभी पूरी अंग्रेजी में तो कभी पूरी हिन्दी में लिखने की कोशिश करने लगा. लेकिन सब बेकार. अंत में उसने पाया कि न उसकी अंग्रेजी इतनी अच्छी है कि वह अपनी कविता को पूरी तरह अंग्रेजी में लिख सके, न उसकी हिन्दी इतनी अच्छी

क्या यह संभव है कि शिक्षित समाज में कुछ लोग हिन्दी लिखते और बोलते रहें तथा कुछ लोग हिंग्लिश का प्रयोग करते रहें? द्वंद्व का यह दौर पढ़े-लिखों और कम या गैर-पढ़े-लिखों के बीच नहीं, बल्कि पढ़े-लिखों और पढ़े-लिखों के बीच है.

है कि वह उसे पूरी तरह हिन्दी में लिख सके. थक कर वह उस रात बिना खाए ही सो गया. अगले कई महीनों तक उसने कोई कविता नहीं लिखी.

जिस हिंग्लिश को बातचीत की भाषा के स्तर पर स्वीकार करने की तर्क-सम्मत-सी दिखती हुई वकालत सुरेश कुमार (जनसत्ता) कर रहे हैं, उसका एक नतीजा यही होने वाला है. यह सिर्फ मेरी कल्पना नहीं है, सुरेश जी भी संजीदा हो कर भविष्य की कल्पना करेंगे, तो उनके हाथ भी यही लगेगा. मैं जानता हूं कि वे भाषा के मामले में सक्षम और सुरुचि-संपन्न व्यक्ति हैं, तभी इतनी प्रांजल भाषा में उन्होंने यह टिप्पणी लिखी है. वे हिंग्लिश के बढ़ते हुए असर से खुद भी चिंतित हैं. वे बहुत साफ-साफ कहते हैं, 'हां, यह ठीक है कि हिंग्लिश की यह वकालत आधा सच है. बाकी आधा सच नकारात्मक ही है. शिक्षा विशारदों के अनुसार यह सामान्यतया हिन्दी पर अधिकार, न अंग्रेजी पर अधिकार की स्थिति है. इसे शिक्षा-व्यवस्था का अंग नहीं बनाया जा सकता - ऐसी हिन्दी सीखने-सिखाने का आदर्श नहीं बन सकती.' फिर भी, उनकी मान्यता यह है कि 'जिस प्रकार समाज में प्रचलित व्यवहारों में कुछ ही अनुकरणीय होते हैं, शेष अन्य को हम बर्दाश्त करते हैं, इस प्रकार हिंग्लिश को भी हम बर्दाश्त करेंगे, करना पड़ेगा, पर उसके अनुकरण को भाषा सौष्ठव की दृष्टि से सब प्रयोजनों के लिए संस्थागत आधार पर प्रोत्साहित न करना ही उचित होगा?'

जाहिर है, सुरेश कुमार के इरादे में कोई खोट नहीं है. वे हिन्दी के शुभचिंतक हैं. वे उन लोगों के भी शुभचिंतक हैं जो परिस्थितिवश हिंग्लिश का प्रयोग कर रहे हैं. इस दुहरी प्रतिबद्धता की वजह से ही वे एक क्षेत्र हिन्दी को देते हैं जहां कोई भी समझौता उन्हें मंजूर नहीं है और एक क्षेत्र हिंग्लिश को, जहां कोई भी समझौता मान्य है. अगर सुरेश कुमार इस उदाहरण का आनंद ले सकें, तो मैं कहना चाहूंगा कि यह बंटवारा कुछ-कुछ इलाहाबाद उच्च न्यायालय के उस फैसले की तरह है जिसे मान लेने पर विवादग्रस्त भूमि पर न मंदिर बन सकेगा न मस्जिद खड़ी की जा सकेगी. कई बार समाज न्यायालय से अधिक बुद्धिमान होता है. हिन्दी के इसी समाज का आग्रह है कि अगर बीस करोड़ लोगों की इस भाषा ने इस रपटीली राह पर चलना स्वीकार कर लिया, तो अंततः वह खत्म हो जाएगी, उसकी गिनती क्रियोल भाषाओं में होने लगेगी, जिसका मतलब यह है कि वह न इधर की रहेगी न उधर की और शायर कहेंगे, सुनते हैं कि हिन्दी भी थी अच्छी-सी इक जुबान?

मुद्दा साधु भाषा और जन भाषा का नहीं है. दोनों में हमेशा अंतर रहा है. मुद्दा सिद्धांत और व्यवहार का भी नहीं है. दोनों में फर्क जितना ज्यादा हो, जीवन उतना ही प्रदूषित होता है. मुद्दा यह है : क्या यह संभव है कि शिक्षित समाज में कुछ लोग हिन्दी लिखते और बोलते रहें तथा कुछ लोग हिंग्लिश का प्रयोग करते रहें? द्वंद्व का यह दौर पढ़े-लिखों और कम या गैर-पढ़े-लिखों के बीच नहीं, बल्कि पढ़े-लिखों और पढ़े-लिखों के बीच है. यही, एक ही, वर्ग हिंग्लिश का जनक है. इस वर्ग की झूठी तारीफ में 'द्विभाषी संस्कृति' नामक एक विचित्र चीज की कल्पना की गई है. मैं नहीं जानता कि यह चिड़िया देश के किस भाग में पाई जाती है. अशोक वाजपेयी और कृष्ण कुमार जैसे विशिष्ट अपवादों को छोड़ दिया जाए, तो जो लोग मुख्यतः अंग्रेजी में काम करते हैं, उनकी हिन्दी हांफती रहती है और जो मुख्यतः हिन्दी में काम करते हैं, उनकी अंग्रेजी को हिचकी आती रहती है. क्या हम उस दौर की असहाय प्रतीक्षा करते रहें जब हिन्दी 'द्विभाषी संस्कृति' की नकली आभा से चमकने लगेगी और अंत में खोटा सिक्का असली सिक्के को बाजार से बाहर कर देगा?

सुरेश कुमार व्यावहारिक समस्याओं का हल निकालने के लिए यह व्यावहारिक सुझाव देते हैं, 'अगर हम पाठ्य पुस्तकों की हिन्दी में विशिष्ट तकनीकी शब्दावली अंग्रेजी में (रोमन लिपि का प्रयोग करते हुए) रखें और सामान्य शब्दावली (बहुप्रचलित तकनीकी शब्दों के साथ) और वाक्य रचना हिन्दी में ही रहे तो क्या हमारे प्रशिक्षुओं का ज्ञान, व्यवहार की दृष्टि से अधिक कार्यसाधक न होगा? बोलें 'ग्लोबल वार्मिंग' और पढ़े-लिखें 'वैश्विक तापमान वृद्धि' तो क्या उनकी उलझन और बोझ नहीं बढ़ेंगे?' बढ़ेंगे, जरूर बढ़ेंगे. लेकिन यह बढ़ना वैसा ही होगा जैसे पहले तो किसी की टांग तोड़ दी जाए और जब डॉक्टर उसके लिए बैसाखी बनाने लगे, तो शिकायत की जाए कि इससे उस आदमी की उलझन और बोझ नहीं बढ़ेंगे? बेशक टूटे हुए पैरों को बैसाखी अच्छी लगती है, लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि बैसाखी का प्रचलन बढ़ाने के लिए लोगों की टांगें तोड़ना शुरू कर दिया जाए. फिर तो बाजार में बैसाखी ही बैसाखी दिखने लगेगी.

> भारत के दस बड़े फिल्मी सितारों, दस बड़े खिलाड़ियों, दस बड़े उद्योगपतियों और दस बड़े मीडिया व्यक्तित्वों में आधे भी ऐसे नहीं हैं जो अपनी मातृभाषा में दस शुद्ध वाक्य बोल या लिख सकें.

अंत में बैसाखी उद्योग के हित में यह राष्ट्रीय नीति बनाई जाएगी कि जन्म लेते ही बच्चों के दोनों पैर काट दिए जाएं.

जाहिर है, सुरेश कुमार जैसे सुधी लोग इस दृश्य की कल्पना कर कांप उठेंगे. लेकिन हिंग्लिश को थोड़ी भी मान्यता मिल गई, तो वह बीस-तीस साल में ही हिन्दी को चट कर जाएगी. भाषा पहले बोली जाती है, फिर लिखी जाती है. लिखे जाने पर उसके मानक रूप स्थिर होते हैं. इसी मानक रूप से भाषा का विकास होता है. उसमें साहित्य और दर्शन की सृष्टि होती है. जब बोली जाने वाली भाषा आक्रामक रूप से अशुद्ध होने लगती है, तब समाज में शुद्ध भाषा की रक्षा वैसे ही की जाती है जैसे संस्कृत भाषा की रक्षा की गई है - उसके हाथ-पांव बांध कर. इसी प्रक्रिया में संस्कृत जानने वालों की संख्या कम होती गई और अब वह पोथियों में ही मिलती है. हिंग्लिशीकरण के बाद भी हिन्दी रहेगी, क्यों नहीं रहेगी, पर कुछ किताबों तक महदूद हो कर.

अंग्रेजी राज में हिंग्लिश की शुरुआत नहीं हुई, जब इसकी गुंजायश बहुत ज्यादा थी. यह शुरुआत आजादी के कई दशकों के बाद हुई, क्योंकि भारत का शासक वर्ग हिन्दी सीखने और उसका प्रयोग करने के लिए राजी नहीं था. यही दुर्दशा अन्य भारतीय भाषाओं की भी हुई. वे साधन-संपन्न लोगों द्वारा मजा लेने के लिए नौकरानियों से पैदा हुई संतानें हो गईं. अगर शुरू से ही भाषा नीति और शिक्षा नीति को आमूलचूल बदल कर उनका भारतीयकरण करने का व्यवस्थित प्रयास किया गया होता, तो आज हिन्दी के शिक्षित समाज में 'ग्लोबल वार्मिंग' जैसे शब्द नहीं सुने जाते. आखिर कोई तो बात होगी कि भारत के दस बड़े फिल्मी सितारों, दस बड़े खिलाड़ियों, दस बड़े उद्योगपतियों और दस बड़े मीडिया व्यक्तित्वों में आधे भी ऐसे नहीं हैं जो अपनी मातृभाषा में दस शुद्ध वाक्य बोल या लिख सकें. यही वे डॉक्टर बंधु हैं जो पहले आदमी की टांग तोड़ते हैं और फिर कहते हैं, बैसाखी का इस्तेमाल करने में बुराई क्या है; देखो, हम भी तो बैसाखी पर ही चल रहे हैं. ■

60 MILLION CHILDREN IN INDIA have no means to go to school

Contribute just Rs. 2750*

and send one child to school

for a whole year

Central & General Query

info@smilefoundationindia.org

http://www.smilefoundationindia.org/contactus.htm

गर्भनाल द्वारा जनहित में जारी

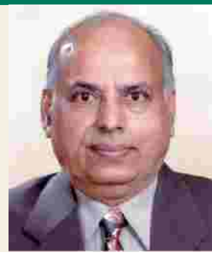

Suresh Chandra Jain
Chairman, State Expert Appraisal Committee, Govt. Of India, Ministry of Environment.
Former IAS Officer Govt. of M.P.
30, Nishat Colony, Bhopal (M.P.) - 462 003 India E-mail : scjain17@gmail.com

उपकार करें, स्वस्थ रहें

नैतिक शिक्षा के महत्वपूर्ण पाठों में से एक अहम सीख यह भी है कि हमें दूसरों के साथ वैसा ही व्यवहार करना चाहिये जैसा कि हम खुद उनसे चाहते हैं. इस स्वर्णिम नियम को अपने और अपने परिवार के प्रत्येक सदस्य के व्यक्तित्व और जीवन में उतारें. परहित की भावना केवल नैतिक उपदेश नहीं है. यह केवल आध्यात्मिक विकास के लिए ही आवश्यक नहीं है अपितु हमारे शारीरिक, मानसिक एवं भावनात्मक स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है. दूसरों को सहयोग प्रदान करने से हमें निश्चित ही सुख और संतोष की प्राप्ति होती है. अनेक अवसरों पर आर्थिक लाभ प्राप्त होता है.

सामान्यतः यह कहा जाता है कि आर्थिक सिद्धांतों का पालन करते हुए हमें परोपकार की भावना बनाए रखना संभव नहीं हो पाता है. हम परोपकार करने की क्रिया को अनार्थिक क्रिया के रूप में स्वीकारते हैं. हम सहजता से परोपकार नहीं कर पाते हैं. यह भी सही है कि अधिकांश व्यक्ति अधिकांश समय तक स्वार्थ की सोची समझी नीति के अनुरूप व्यक्तिगत हित में ही कार्य करते है क्योंकि जीव विज्ञान में भी सेलफिस जीन की धारणा बड़ी प्रभावी है. सामान्यतः यह स्वीकार किया जाता है कि विकास की दिशा और गति निर्धारित करने में स्वार्थ की भावना महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करती है. किन्तु यह पूर्णतः सही है कि अनार्थिक क्रिया भी आर्थिक क्रिया को जन्म देती है और कभी-कभी स्वयमेव ही आर्थिक क्रिया में परिवर्तित हो जाती है. अनार्थिक कार्य आर्थिक कार्यों में बदल जाते हैं. परोपकार की भावना ही सच्ची आध्यात्मिकता को जन्म देती है और विकास की गति को तीव्रता प्रदान करती है. परोपकार हमारी आत्म संतुष्टि की संपूर्ति का महत्वपूर्ण सहयोगी ही नहीं किन्तु महत्वपूर्ण साधन है. हमारे आत्म सम्मान का संवर्धक है. परोपकार से हमें अनेक शारीरिक एवं मनोवैज्ञानिक लाभ प्राप्त होते हैं. परोपकार से हम शारीरिक रूप से स्वस्थ एवं प्रसन्न रहते हैं.

हमें यह समझना आवश्यक है कि सभी जीवों के प्रति जीवंत अपनत्व की भावना विकसित किए बिना प्रार्थना, व्रत और उपवास पूर्णतः फलदायी नहीं हो पाते हैं. मनोवैज्ञानिकों ने यह सिद्ध कर दिया है कि हम अपनी पत्नि, बच्चों,

> "परहित की भावना केवल नैतिक उपदेश नहीं है. यह केवल आध्यात्मिक विकास के लिए ही आवश्यक नहीं है अपितु हमारे शारीरिक, मानसिक एवं भावनात्मक स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है."

> परहित की भावना हमारे शारीरिक स्वास्थ्य और मानसिक संतोष के लिए महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करती है.

संबंधियों और मित्रों को सहयोग प्रदान करने से अधिक आयु प्राप्त करते हैं. लेने के दर्शन से देने का दर्शन श्रेष्ठ है. अच्छे और परोपकारी कार्यों, सद्प्रवृत्तियों और स्वस्थ चिंतन मनन से हमें अनेक लाभ प्राप्त होते हैं. उनका प्रभाव हमारे बहुमुखी जीवन की अनेक सफलताओं पर पड़ता है. हम दिल के दौरे से बच जाते हैं. एस्प्रिन की गोली की तुलना में परोपकार के कार्यों से पाँच गुना अधिक लाभ प्राप्त होता है. सहानुभूति पूर्वक दूसरों की बात सुनने से ही हमें दो गुना लाभ प्राप्त होता है. सामाजिक न्यूरोसाइंस में किए गए अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि हमारे मस्तिष्क के तंत्र से ही परोपकार की भावना और परोपकार की प्रवृत्ति और क्रिया जुड़ी रहती है. दूसरों का दुख देखकर हमारे मस्तिष्क में विद्यमान दुख का नेटवर्क सक्रिय हो जाता है. दूसरे शब्दों में हमारे मस्तिष्क में स्थित मिरर न्यूरोन्स सक्रिय हो जाते हैं. परोपकारी व्यवहार देखकर हमारे मस्तिष्क में एक विशेष हार्मोन का स्राव होता है जिससे हमारे मन में प्रसन्नता की भावना जन्म लेती है. हमारा व्यक्तित्व पूरी तरह से खिल जाता है.

हमारे शिशुओं में भी परोपकार की भावना पाई जाती है. अपने बच्चों में परोपकार की भावना विकसित करने के लिए उनको परोपकारी व्यवहार से संबंधित चित्र दिखाएं. उन्हें परोपकार से ओतप्रोत कहानी सुनाएं. अच्छी पुस्तके पढ़ाएं. परोपकार की गतिविधियों में भाग लेने के लिए प्रेरित करें.

परोपकार की भावना और परोपकार की क्रिया हमारे शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक एवं आध्यात्मिक विकास के लिए आधारभूत भावना है. परहित की भावना हमारे शारीरिक स्वास्थ्य और मानसिक संतोष के लिए महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करती है. इसमें अनुभव की आंच में ढली सच्चाई भी है. दूसरों की मदद करने से हमें सुख की प्राप्ति होती है. सेवा से प्रेरित कार्य ही सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य होते हैं. पर हित ही सबसे बड़ा धर्म है. अतः हम पर हित के कार्यों में रुचि लेकर संतोष और शांति प्राप्त करें.■

Who Are You Calling Old?

Proud2B60 :

is a special campaign by Help Age India.

Millions of people are living their later years with unprecedented good health, energy and expectations for longevity.

Suddenly, traditional phrases like "old" or "retired" seem outdated. Help Age's "Who Are You Calling Old?" campaign presents the many faces of this New Age.

New language, imagery, and stories are needed to help older people and the general public re-envision the role and value of elders and the meaning and purpose of one's later years. This campaign is about leading this change. It is about combating the negative image of the frail, dependent elder.

General Query

http://www.helpageindia.org

गर्भनाल द्वारा जनहित में जारी

डॉ. एम. फ़िरोज़ खान
टाण्डा-अम्बेडकरनगर, उत्तरप्रदेश में जन्म. एम.ए., पी-एच.डी (हिन्दी) ए.एम.यू. अलीगढ़. राष्ट्रीय-अन्तर्राष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं में तीन दर्जन से अधिक शोध-आलेख प्रकाशित. एक दर्जन से अधिक पुस्तकें प्रकाशित. अलीगढ़ से निकलने वाली वाड्मय पत्रिका के सम्पादक हैं.
सम्पर्क : vangmaya@gmail.com

साम्प्रदायिकता की अभिव्यक्ति और ज़ीरो रोड

भारतीय जन-जीवन के प्राचीन स्वरूप में विभिन्न तत्त्वों का समावेश होते हुए भी एकात्मकता के दर्शन होते थे. भारत का विशाल जन-समुदाय परस्पर सद्भाव और राष्ट्रीयता की अनुभूति से संगठित था. जातिवाद, अस्पृश्यता एवं अल्पसंख्यक समूह, भाषावाद आदि तत्त्व भारत में दीर्घकाल से विद्यमान है. लेकिन आधुनिक युग में विभिन्न राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक परिवर्तनों की गति तीव्र हो जाने के कारण ये दबे हुए तत्त्व विकसित होकर विकराल रूप में अवतरित हो गये.

यद्यपि इस शताब्दी में भारत में साम्प्रदायिकता की समस्या ने विकराल रूप धारण कर लिया, लेकिन इसका सूत्रपात १९वीं शताब्दी में ही हो गया था. जब १८२० में सर्वप्रथम अरब में वहाबी आन्दोलन का सूत्रपात हुआ, भारत में सईद अहमद बरेलवी ने मक्का से लौटकर ज़िहाद आन्दोलन प्रारम्भ कर दिया. सन् १८८७ में सर सैयद अहमद खाँ के अलीगढ़ आन्दोलन से इस वैमनस्यता का रूप व्यापक हो गया. सर सैयद ने १८८७ में मुस्लिम सम्मेलन की स्थापना की. इन प्रयासों से अंग्रेज़ काफ़ी उत्साहित हुए और उन्होंने हिन्दू-मुसलमान विघटन का राजनैतिक लाभ उठाने का प्रयास किया.

अंग्रेज़ शासक जहाँ एक ओर सामंती युग के अवशेष जमीदारों, राय बहादुरों, नवाबजादों के प्रत्यनों से राजनीतिक जागृति को दबाने का प्रयत्न कर रहे थे वहाँ दूसरी ओर वे कभी एक वर्ग का पक्ष तो और कभी दूसरे को संरक्षण दे हिन्दू-मुस्लिम दोनों एवं ब्राह्मण-अब्राह्मण के प्रश्न के रूप में जातीय द्वेष की भूमि तैयार कर रहे थे. उन्होंने मुसलमानों को प्रेरित किया कि साम्प्रदायिकता के आधार पर प्रतिनिधित्व की मांग करें. १९०६ में मुस्लिम लीग की स्थापना हुई. सन् १९०९ में मार्ले मिण्टो सुधार अधिनियम पारित हुआ. इस अधिनियम से देश में प्रथम बार साम्प्रदायिक चुनाव प्रणाली का सूत्रापात हुआ. (डॉ. मो. फरीदुद्दीन, राही मासूम रज़ा के उपन्यासों का समाजशास्त्रीय अध्ययन)

> *जातिवाद, अस्पृश्यता एवं अल्पसंख्यक समूह, भाषावाद आदि तत्त्व भारत में दीर्घकाल से विद्यमान हैं. लेकिन आधुनिक युग में विभिन्न परिवर्तनों की गति तीव्र हो जाने के कारण ये दबे हुए तत्त्व विकसित होकर विकराल रूप में अवतरित हो गये.*

नासिरा शर्मा ने 'ज़ीरो रोड' उपन्यास में इलाहाबाद के एक मोहल्ला-चक का वर्णन किया है जिसमें मोहल्ले की एक तंग गली में रहने वाले रामप्रसाद की हालत का चित्रण किया है कि इस मुस्लिम मोहल्ले में वे अपने आपको असुरक्षित महसूस करते है- 'फिर शहर का जो हाल है उसमें मुसलमानों का पड़ौसी होना कोई सुख की बात नहीं है. पुरखों का मकान न होता तो यूँ हम इनके बीच घिरे न होते कब का बेचकर हिंदुवानी बस्ती में जा पहुँचते.' (नासिरा शर्मा, जीरो रोड, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, पृ. २२)

आजकल लोगों की मानसिकता इतनी दूषित हो गई है कि वह जिस धर्म का है उसी धर्म के लोगों के साथ और उन्हीं मोहल्ले में रहना चाहता है उसी में सुख-चैन ले पाता है और वह उसी में अपने आपको सुरक्षित महसूस करता है.

जिस तरह से मुस्लिम बाहुल्य क्षेत्र में हिन्दू असुरक्षित महसूस करता है उसी तरह से हिन्दू बाहुल्य क्षेत्रों में फँसे मुसलमानों को भी असुरक्षा की भावना सताती रहती है. इसी उपन्यास के एक पात्र के द्वारा नासिरा शर्मा ने साम्प्रदायिकता के स्वरूप का चित्रण करती है- 'आगा-पीछा देखकर हमको कम से कम आपस में मेलजोल से रहना चाहिए. आखिर अपनों के घर ही कितने है-आठ-दस.' (वही, पृ. २२)

इसी उपन्यास की एक पात्रा अपने पिता से कहती है कि 'अब्बू जी अगर हम मुसलमान न होते, मारने वाले हिन्दू न होते तो हामिद भाई हमें यूँ छोड़कर न जाते.' कुछ लोगों की वजह से असुरक्षा और आशंका के माहौल के लिए राजनीति को ही लेखिका दोषी मानती है- 'किसी हादसे को तकदीर नहीं बनने देना चाहिए और जो ज़िन्दा नहीं है उसे ख़्यालों में ज़िन्दा रखा जा सकता है.' (वही, पृ. ३३७)

> साम्प्रदायिकता से होने वाले नुकसान को लेखिका ने अपने उपन्यास में जगह-जगह पर उल्लेख किया है. मुसलमान ज्यादा मरे या हिन्दू? इसका हिसाब न लगाकर यदि इतना ही जोड़ा जाए कि कितने इन्सान मरे, कितने हिन्दुस्तानी मरे, तो यह सवाल उठेगा कि आखिर क्यों?

साम्प्रदायिक दंगे-फसाद से सभी धर्मों का नुकसान होता है. सबसे ज़्यादा नुकसान आमजन का होता है, क्योंकि जो लोग प्रतिदिन कमाते हैं और अपना परिवार पालते है. अगर ऐसे में एक दिन काम न करे तो कहां से खर्च चलेगा. लेखिका ने ज़ीरो रोड उपन्यास में साम्प्रदायिकता से होने वाली घटना का चित्रण किया है-'रात-दिन सभी के घर और बाहर गुजरात के... किसी मुसलमान के घर में आग लगने से पड़ौस का मकान भी झुलस गया था, जहाँ समीर का बहनोई किराये पर रहता था. हम मर्द जब राजनीति की आग सुलगाते हैं तो भूल जाते हैं कि उसमें मर्द ही मरते हैं, मगर जो औरतें ज़िन्दा बच जाती हैं उन पर क्या गुजरती है. गुजरात में माँ के पेटों से ज़िन्दा बच्चों को मौत की नींद सुलाया था.' (वही, पृ.१९६)

साम्प्रदायिकता से होने वाले नुकसान को लेखिका ने अपने उपन्यास में जगह-जगह पर उल्लेख किया है. मुसलमान ज्यादा मरे या हिन्दू? इसका हिसाब न लगाकर यदि इतना ही जोड़ा जाए कि कितने इन्सान मरे, कितने हिन्दुस्तानी मरे, तो यह सवाल उठेगा कि आखिर क्यों? गुजरात के दंगों का हाल सुन-सुनकर उपन्यास का मुख्य नायक सिद्धार्थ ऐसे हादसों के लिए राजनीति को जिम्मेदार ठहराता है- 'सियासत ने जो घृणा की आग सुलगायी है, उसे बुझाते-बुझाते बरसों लग जाएंगे. जिन्होंने अपनों को खोया है क्या वह इस याद से मुक्त हो पाएंगे?' (वही, पृ. १९७)

विभाजन की त्रासदी के बाद आम हिन्दू जन यही सोचता है- 'तभी समीर ने घृणा से कहा था कि साले मुसलमान उस समय पाकिस्तान मरने क्यों नहीं चले गये थे. जब देखो तब इनको लेकर शान्ति भंग होती है.' (वही, पृ. १९७) यहाँ पर यह सोच गलत साबित होती है कि अगर सारे मुसलमान पाकिस्तान चले जाते तो हिन्दुस्तान में दंगा नहीं होता, क्या मुसलमानों ने हिन्दुस्तान को आज़ाद करवाने में साथ नहीं दिया था. क्या सारे मुसलमान बाहर से आये थे. यह संकीर्ण

> देश का विभाजन राजनेताओं ने कराया है इसके लिए हम लोग दोषी नहीं है- यह बँटवारा हमने नहीं कराया था. मैं तो उन करोड़ों इन्सानों में एक हूँ जो न बिहार में रह सका न पूर्वी पाकिस्तान में, न पश्चिम पाकिस्तान में.

सोच बदलनी पड़ेगी तभी हिन्दुस्तान में सुख-शान्ति और भाईचारा बना रह पाएगा.

इस सन्दर्भ में यह उल्लेख करना ज़रूरी है कि समीर जैसे हिन्दू बहुत कम होते हैं और उनके सोचने-समझने से क्या इस समस्या का हल निकल सकता है. लाखों-करोड़ों मुसलमानों को हिन्दुस्तान से बाहर नहीं खदेड़ा जा सकता है. इन सबका एक ही रास्ता है कि आपसी मेल-जोल और सौहार्द्र बनाकर दोनों सम्प्रदायों के लोग प्यार-मुहब्बत के साथ रहें- 'इस सियासत ने उठाकर मुल्क के दो टुकड़े कर दिये है, क्या अब भी जी नहीं भरा.' (वही, पृ. १८४)

इलाहाबाद गंगा-जमुनी संस्कृति का शहर माना जाता है लेकिन इस शहर में भी १९९०-९२ के बीच कट्टरपंथियों ने साम्प्रदायिकता का जहर फैला दिया था. उसी शहर का पात्र-जिसका नाम सिद्धार्थ है उसने नवयुवकों के गुट में शामिल होकर वहाँ पर अशान्ति फैला दी और एक मुस्लिम नवयुवक के ऊपर बम फेंककर उसकी जान ले ली लेकिन कुछ समय पश्चात् उसको अपराधबोध होता है और उसके जेहन में यह घटना उसका पीछा करती रहती है. लेखिका ने ज़ीरो रोड उपन्यास में धार्मिक उन्माद फैलाने वाले व्यक्तियों का चित्रण किया है.

देश के बँटवारे में आम मुसलमानों का कुछ लेना-देना नहीं था. इसीलिए ज़ीरो रोड उपन्यास का एक पात्र बरकत उस्मानी सिद्धार्थ से कहता है कि देश का विभाजन राजनेताओं ने कराया है इसके लिए हम लोग दोषी नहीं है- 'यह बँटवारा हमने नहीं कराया था. मैं तो उन करोड़ों इन्सानों में एक हूँ जो न बिहार में रह सका न पूर्वी पाकिस्तान में, न पश्चिम पाकिस्तान में. दरअसल तुम्हें वहाँ के बिहारी मुसलमानों से की गयी नफरत का अंदाजा नहीं हैं.' (वही, पृ.९१-९२)

लेखिका साम्प्रदायिकता का जहर फैल जाने के दुष्परिणाम का चित्रण करके यह संदेश देना चाहती है कि साम्प्रदायिकता का जहर समाज के सभी वर्गों को तबाह कर देता है और यह बताना चाहती है कि आम हिन्दू और मुसलमान किसी तरह की अशान्ति नहीं चाहता.

ज़ीरो रोड उपन्यास में लेखिका ने साम्प्रदायिकता के स्वरूप पर प्रकाश डालने के लिए हिन्दू-मुस्लिमों में व्याप्त होने वाली घृणा और उसके परिणामस्वरूप, उसकी प्रतिक्रिया और व्यक्ति मन में चढ़े जुनून का चित्रण कर यह संदेश दिया है कि जुनून में व्यक्ति मानवता तक को भूल जाता है और दंगा-फसाद हो जाता है जबकि आम आदमी ऐसा करना नहीं चाहता. दंगा-फसाद कुछ ही व्यक्तियों की देन होती है.

ज़ीरो रोड उपन्यास में हामिद की बम बलास्ट में हत्या किये जाने के बावजूद हामिद के पिता को इस प्रकार की सोच वाला दिखाया है कि उसके जहन में किसी प्रकार की प्रतिक्रिया न होकर शान्ति का भाव विद्यमान है. इस प्रकार हामिद के पिता की समझदारी में ही लेखिका ने साम्प्रदायिक-सौहार्द्र का एक सूत्र छोड़ देती है. इसी उपन्यास का एक पात्र बरकत उस्मानी कहता है कि राजनीति से अधिक मानवता को तरजीह देने से ही साम्प्रदायिक-सौहार्द्र बन सकता है.

उपन्यास ज़ीरो रोड की एक पात्रा के द्वारा लेखिका कहलवाती है कि धार्मिक उन्माद से काम नहीं चलता- 'आदमी का काम आदमी से चलता है न कि धर्म और उन्माद से.' (वही, पृ. १५४) जबकि पूरे देश भर में इस्लाम के विरुद्ध यह प्रचार किया जा रहा है कि इस्लाम आतंकवाद को न केवल बढ़ावा देता है बल्कि मरने-मारने के लिए अपने अनुयायियों को प्रोत्साहित करता है. मुन्ना हाफिज के विषय में लेखिका की यह टिप्पणी- 'दिल्ली से लौटते हुए मुन्ना हाफिज का दिल बहुत भारी था. उन्हें याद नहीं पड़ता कि बचपन में उन्होंने शरारत से भी किसी जानवर को दुख पहुँचाया हो या फिर किसी साथी लड़के को मारा-पीटा हो. कोशिश उनकी यही रही है कि जुल्म व सितम, लड़ाई-झगड़े से जितना भी दूर रहा जाए उतना ही बेहतर है.' (वही, पृ. २९३)

इस प्रकार कहा जा सकता है कि नासिरा शर्मा ने ज़ीरो रोड उपन्यास में साम्प्रदायिक दंगों के वीभत्स चित्र उभारे हैं, वहीं साम्प्रदायिक-सौहार्द बनाये रखने के लिए उपाय भी बताये हैं.■

गंगानन्द झा

बैद्यनाथ-देवघर (झारखण्ड) में जन्म. सीवान (बिहार) के डी.ए.वी स्नातकोत्तर कॉलेज में वनस्पति-शास्त्र की अध्यापन से सेवा-निवृत्त. चार्ल्स डार्विन के क्रम-विकासवाद, जवाहरलाल नेहरू के scientific temper तथा रवीन्द्रनाथ ठाकुर के जीवन-दर्शन के समन्वय के आलोक में जीवन-पथ के प्रति अपने कौतूहल बरकरार है. वर्तमान में चण्डीगढ़ में अपने चिकित्सक पुत्र के साथ निवास.

सम्पर्क : ganganand.jha@gmail.com

गुप्तकाशी में स्वास्थ्य शिविर

कुछ सालों पहले हमें एक अनोखा और न भूलने लायक अनुभव हुआ. मेरा बेटा, जो चण्डीगढ़ के पी.जी.आई. में प्रोफेसर के पद पर कार्यरत है, अपने कुछ अन्य साथियों के साथ हिमालय की गोद में केदारनाथ मठ से करीब ४३ किलोमीटर की दूरी पर अवस्थित गुप्तकाशी में आयोजित स्वास्थ्य शिविर में भागीदारी करने के लिए आमन्त्रित किया गया था. उनके साथ एम्स दिल्ली, जम्मू मेडिकल कॉलेज के साथ अन्य प्रतिष्ठित संस्थाओं के वरिष्ठ चिकित्सक भी भागीदारी कर रहे थे. एक खास बात थी कि इन चिकित्सकों के स्वजनों को भी सहायक भूमिकाओं में भागीदारी करनी थी. गुप्तकाशी के आसपास के इलाकों में बिखरे गरीब बासिन्दों को स्वास्थ्य सेवा उपलब्ध कराना ही इस शिविर का उद्देश्य था.

इस शिविर के तीन पहलू थे.

१. रोगियों का विभिन्न स्पेशलिस्टों के द्वारा परीक्षण, साथ ही आधुनिक पैथॉलॉजिकल टेस्ट एवं सर्जरी. होमियोपैथिक पद्धति का इलाज भी

२. सारे मरीजों को मुफ्त दवाइयों की आपूर्ति तथा अन्य आनुसंगिक सुविधाएँ.

३. मरीजों एवं उनके परिचारकों को शिविर स्थल पर ही मुफ्त भोजन कराए जाने की सुचारू व्यवस्था.

शिविर का आयोजन दूधाधारी बर्फानी आश्रम, हरिद्वार के तत्वावधान में इसके महाराजजी द्वारा किया गया था. ऐसे आश्रम विभिन्न सामाजिक संरचनाओं के बीच सम्पर्क-स्थल की भूमिका का निर्वहन करते हैं. महाराजजी किंवदंती एवं अयथार्थ व्यक्तित्व के हैं. हमें मालूम पड़ा कि महाराजजी ने कलकत्ता विश्वविद्यालय से एम.बी.बी.एस. किया था फिर चिकित्सा करने के क्रम में होमियोपैथी की ओर उनका रुझान हो गया और इस विधा में उन्होंने काफी सफलता से चिकित्सा कर यश अर्जन किया. पर

यह सारी सफलता और यश उन्हें सामान्य दुनियावी जिन्दगी में बाँध नहीं पाई. वे हरिद्वार आ गए और संन्यास ग्रहण कर लिया. वे संन्यासियों का गेरुआ लिबास धारण करने की जगह सफेद धोती और चादर पहनते हैं. हमें बताया गया कि वे सर्दियों में बर्फ से ढके बद्रीनाथ धाम के क्षेत्र में तपस्या करने के लिए वास करते हैं. जबकि यहाँ हमने उन्हें मनुष्यों और उनकी समस्याओं के एक अत्यन्त कुशल एवं दक्ष मैनेजर के रूप में सक्रिय देखा. यह भी पता चला कि आश्रम की ओर से ऐसे आयोजन नियमित रूप से हुआ करते हैं. आश्रम के इन आयोजनों में अनोखी बात दिखी कि सभी कार्यकर्ता अवैतनिक होते हैं. सभी विभागों के कार्य स्वयंसेवक लोग ही सम्पादित करते हैं चाहे रसोई हो या खिलाने का या

> *गंगा मानव-चेतना की जननी है. माँ बच्चे को पीटती है, सजाएँ देती है, पर फिर भी बच्चा माँ की गर्दन पकड़कर सोते रहना नहीं छोड़ता.*

व्यवस्थापना का या चिकित्सा सेवाओं का. व्यवस्था एवं रसोई तथा आनुसंगिक कार्यों में महाराजजी के सम्पन्न, सफल एवं स्वस्थ शिष्य लगे हुए थे. ये लोग दूर-दूर से अपने परिवारों के साथ आए हुए थे. शिविर में भागीदारी करनेवाले सारे डॉक्टर अपनी-अपनी स्पेशिलिटी की प्रगति में सक्रिय योगदान करने वाले प्रख्यात और प्रतिष्ठित नाम थे. वहाँ समवेत सारे अन्य व्यक्ति बिना किसी निगरानी और खबरदारी के पूरे समर्पण और तत्परता से सहज रूप से विभिन्न काम को अंजाम दे रहे थे.

चण्डीगढ़ से हमारा काफिला अपराह्न में हरिद्वार के लिए रवाना हुआ. सभी लोग अपने परिवारों के साथ अपनी-अपनी गाड़ियों से जा रहे थे. हरिद्वार के आश्रम परिसर में पहुँचते शाम हो गई. यहाँ रात्रि विश्राम होना था. अन्य जगहों से भी काफिले पहुँचे थे. आश्रम का परिसर काफी विस्तृत है और आधुनिक सुविधाओं से लैस बहुमंजिला इमारत के कमरों में हमारे ठहरने की अच्छी व्यवस्था थी. यहाँ हमारा परिचय आश्रम की भण्डारा संस्कृति से हुआ. पंगत में एक साथ बैठकर भोजन करने के बाद हर किसी ने अपनी-अपनी थाली खुद धोई और फिर सहेजकर वहीं पर रख दिया. परोसने के समय हर वस्तु अपने नाम के साथ 'प्रसाद' का उपसर्ग लगाकर सम्मानित की जाती रही; जैसे पुड़ी प्रसाद, पनीर प्रसाद, दाल प्रसाद, पानी प्रसाद इत्यादि. रात्रि विश्राम करने के बाद सुबह का नाश्ता किया गया और हर व्यक्ति के लिए लंच-पैकेट दिया गया. हर चीज काफी सुस्वादु एवं पौष्टिक थी. इसके बाद सुबह करीब नौ बजे हम अपनी अपनी गाड़ियों से गुप्तकाशी के लिए रवाना हुए.

> गंगा ने इतिहास का निर्माण किया है, गंगा ने इतिहास को निगला भी है. यह ध्वस्त करती है, यह निर्माण करती है, यह डुबो देती है. कितने ही आँसू इसके शरीर में समाए हुए हैं.

करीब छः-सात घण्टों के मनोहारी एवं साँस रोकने वाले लगातार सफर के बाद हम अपनी मंजिल— गुप्तकाशी पहुँचे. राह में ऋषिकेश, देवप्रयाग, अगस्त्यमुनि, रुद्रप्रयाग तथा अन्य स्थान जिनसे भारत की रूपरेखा, भारत की तस्वीर आँकी हुई है, के दर्शन होते गए. हम पहाड़ पर चढ़ते जा रहे थे और हमारी राह के समानान्तर गंगा नदी पहाड़ों पर से नीचे उतर रही थी. गंगानदी के समानान्तर चलते जाना नैसर्गिक अनुभूति थी. अनजाने हम साक्षी हो रहे थे उस नदी के उद्गम और आत्मप्रकाश के, जो इस देश की आत्मा रही है, हमारे इतिहास भूगोल, धर्म, सभ्यता और संस्कृति की कथाएँ गूँजने लगीं थीं. हिमालय की शानदार ऊँचाइयों से दुर्गम, बीहड़ और घुमावदार रास्तों से चट्टानों को तोड़ती, कभी न भटकती, न कभी ठहरती. कितने ही प्रयाग एवं काशी बसाती जाती है यह. गंगोत्री से आती हुई भागीरथी का देवप्रयाग में अलकनन्दा से संगम होता है. इसके पहले ही रुद्रप्रयाग में मन्दाकिनी के साथ अलकनन्दा का संगम हो चुका रहता है. मन्दाकिनी और अलकनन्दा क्रमशः केदारनाथ और बद्रीनाथ के परिवेश से यात्रा पर निकली होती हैं. ऋषिकेश में गंगा का रूप धारण कर चुकी नदी पहाड़ों से उतरने की प्रस्तुति लेती है और हरिद्वार में मैदान पर अवतरित होती है.

हम चिन्तनशील हो जाते हैं.

नदी समुद्र की ओर क्यों दौड़ी जाती है? समुद्र के आह्वान के कारण? क्या नदी को विधाता ने सभ्यता के निर्माण का भार दिया है? या कि नदी अपनी ही छटपटाहट में दौड़ी जाती है? बगैर किसी बाहरी दबाव के, क्योंकि उसके पास कोई विकल्प नहीं होता, अपने अन्तर के पागलपन से विवश होती है वह. क्या महाराजजी गंगा नदी के प्रवाह से ही प्ररोचित हुए हैं?

भूगोल का ज्ञान हमें जानकारी देता है कि गंगा नदी का उत्स मध्य हिमालय के गंगोत्री हिमवाह में हुआ है. अलकनन्दा और भागीरथी की धाराएँ इस हिमवाह के क्रमशः पूरब से और पश्चिम से निकली हैं. इन दो धाराओं का संगम देवप्रयाग में होने के पश्चात् गंगा नाम पड़ता है.

गोमुख गुफा के मुख से बर्फ की पिघली धारा के रूप में भागीरथी उभर आती है. जड़गंगा या जाह्नवी तिब्बत में जन्म लेती है और गोमुख से करीब बीस किलोमीटर दक्षिण-पश्चिम में भागीरथी से मिलती है. यह संयुक्त धारा बन्दरपुंज एवं श्रीखण्ड की गुफाओं से होकर उभरती हुई केदार में बहने वाली मन्दाकिनी से जुड़ती है. रुद्रप्रयाग उनका संगम स्थल है.

भगीरथखडक और सतोपंथ हिमवाहों का विस्तार गंगोत्री से बद्रीनाथ तक है. उत्तरपूर्व में फैला हुआ हिमवाह भगीरथ वर्तमान में गोमुख से दूर हटता जा रहा है, जबकि पहले यह गंगोत्री तक प्रसारित था.

गोमुख के निकट एक चट्टान है, इसका नाम भगीरथ है. कथा के अनुसार राजा भगीरथ ने गंगा को स्वर्ग से धरती पर अवतरित करने के लिए इस चट्टान पर ही तपस्या की थी. उन्होंने गंगा को इस आश्वासन से प्ररोचित किया था कि अगर

> समाज के ऊपरी तले के सुविधासम्पन्न लोगों द्वारा सामुदायिक जीवन की साझीदारी को सहज रूप से अपना लेना इस आयोजन का एक और महत्वपूर्ण पहलू था.

कोई कलंक हुआ तो उनको धोकर मुक्त कर दिया जाएगा.

गंगोत्री के निकट एक और हिमवाह है. इसे रक्तवर्ण कहते हैं. रक्तवर्ण गंगोत्री में समा जाता है. गंगोत्री के सिरों पर मंथनी, स्वच्छन्दा, गहन और किरनात हिमवाह हैं. इसके बाद उत्तरपूर्व की ओर से आती हुई चतुरंगी नन्दनवन के पास इनसे जुड़ती है.

पर्वत शिखरों एवं हिमवाहों का यह जटिल समूह किसी विराट ऋषि की जटा की तरह प्रतीत होता है. इन जालियों से हजारों धाराओं के रूप में उभरकर और पथ में हजारों नदियों से मिलती हुई यह सागर की ओर बढ़ती चली जाती है. गंगा ने इतिहास का निर्माण किया है, गंगा ने इतिहास को निगला भी है. यह ध्वस्त करती है, यह निर्माण करती है, यह डुबो देती है. कितने ही आँसू इसके शरीर में समाए हुए हैं. असाढ़ आया और चला गया, अब सावन आया है. इसके दोनों तट टलाटल भरे हुए हैं. अब इसका कौन सा रूप होगा? कैसी दिखेगी यह?

जो भी स्वरूप हो, गंगा मानव-चेतना की जननी है. माँ बच्चे को पीटती है, सजाएँ देती है, पर फिर भी बच्चा माँ की गर्दन पकड़कर सोते रहना नहीं छोड़ता. उसके गालों पर सूखे हुए आँसू की छाप साफ-साफ देखी जा सकती है, पर उसके ओठों पर सुरक्षा की शान्ति छाई रहती है. वह गंगा है, विराट शिशु की शाश्वत जननी!

स्वास्थ्य शिविर के आयोजन के लिए एक इण्टरमिडियट कॉलेज का परिसर चुना गया. सात किलोमीटर की दूरी पर ऊपर पहाड़ में अवस्थित जवाहर नवोदय विद्यालय के परिसर में शिविर के आयोजक एवं भागीदारी करने वालों के ठहरने का इन्तजाम किया गया था. चूँकि विद्यालय में छुट्टियाँ चल रही थीं, इसलिए यह सम्भव हो पाया था.

शिविर-स्थल पर सुबह ठीक आठ बजे से हलचल शुरू हो जाती तथा देर अपराह्न तक बनी रहती थी. सात हजार से अधिक मरीजों का शिविर के पाँच दिनों की अवधि में उपचार किया गया. विभिन्न प्रकार के प्रयोगशाला के परीक्षण किए गए और सर्जरी भी होती रही. सभी रोगियों को मुफ्त दवाएं वितरित की गईं. साथ ही साथ सारे मरीजों और उनके साथियों से बड़ी ही विनम्रता से प्रसाद (भोजन) ग्रहण करने का अनुरोध किया जाता रहा. बिना किसी तामझाम के उन्हें सम्मानपूर्वक भोजन कराया गया. कोई शोर नहीं, कोई हड़बड़ी नहीं, कोई शिकायत नहीं. महाराजजी बस मुस्कुराते हुए सबों से बातें करते हुए लोगों के बीच टहलते रहे थे.

जैसा पहले बताया गया है, शिविर के कार्यकर्ताओं और आयोजकों के ठहरने की व्यवस्था स्वास्थ्य शिविर से सात किलोमीटर दूर पहाड़ पर नवोदय विद्यालय परिसर में की गई थी. सुबह की चाय और नाश्ता तथा शाम की चाय और रात का भोजन उन्हें वहीं मिला करता. दिन के भोजन में शिविर-स्थल पर मरीजों के साथ ही उनकी भी भागीदारी होती. कोई विशिष्टता नहीं, कोई फर्क नहीं. भोजन सादा पर सुस्वादु था, किसी तरह के नाक भौं सिकोड़ने या सहिष्णुता के लक्षण नहीं उभरे थे. साथ ही थालियों में जूठन बिलकुल नहीं बची होती. रसोई की व्यवस्था सुबह शाम दोनों शिविरों में स्थानान्तरित सहजता से हो जाया करती थी. आयोजक एवं भागीदार बड़े तथा बच्चे—अक्सर दोनों शिविर स्थलों के बीच ट्रेकिंग का आनन्द लेते हुए सहजता से आवागमन किया करते.

इस आयोजन का एक और महत्वपूर्ण पहलू था. समाज के ऊपरी तले के सुविधासम्पन्न लोगों द्वारा सामुदायिक जीवन की साझीदारी को सहज रूप से अपना लेना. अवश्य ही अल्प कालावधि के लिए.

क्या यह सारा अनुभव वास्तविक था? शक्की लोग हमेशा सवाल उठाते रहते हैं. क्या यह आध्यात्मिक ऊर्जा के मानवता की सेवा में नियोजन का दृष्टान्त था? विशाल संसाधनों का स्रोत क्या था? भागीदारों को उत्प्रेरित करनेवाली शक्ति कौन सी थी? साधारण से परे की कुछ बात लगती है. सांसारिक रूप से चतुर एवं सफल व्यक्ति ऐसी गतिविधियों को क्यों बढ़ावा देंगे, जिसमें उनका खुद का कोई निहित स्वार्थ न हो?

अपने अनजाने कभी कभार ऐसे अवसर हमें अपनी ओर खींचते हैं जब हम समाज से जो कुछ पाए रहते हैं उसके एवज में कुछ लौटाने का सन्तोष मिलता लगता है. कुछ और लोग आध्यात्मिक रुझान के कारण दातव्य कामों में भागीदारी करते हैं. इनके अलावे भी लोग हो सकते हैं जिन्हें ऐसे कामों में दूसरी ही वजहें आकर्षित करती हैं.

मेरी पत्नी को इस शिविर में भागीदारी करने से बाबा केदारनाथ के दर्शन करने की अपनी पुरानी कामना को सम्पन्न करने का सौभाग्य मिल गया. समयाभाव के कारण बाबा बद्रीनाथ तक जा पाना नहीं हो पाया. हो सकता है, फिर उनका बुलावा भी आए. कौन जानता है?

कुल मिलाकर यह एक समृद्धकारी अनुभव रहा.■

वन्दना गुप्ता

पढ़ने-लिखने में दिलचस्पी. अपने हिन्दी ब्लॉग http://vandana-zindagi.blogspot.com पर लिखती हैं. विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में कविता, कहानी एवं आलेख प्रकाशित. 'हिंदी ब्लॉगिंग का इतिहास' पुस्तक प्रकाशित. ऑल इंडिया ब्लॉगर्स एसोसियेशन नामक ब्लॉग की अध्यक्ष हैं.

सम्पर्क : rosered8flower@gmail.com

हिंदी ब्लॉग में भी हैं अनमोल मोती

शब्दों को आकार देना और उन्हें एक मंच प्रदान करने में ब्लोगिंग के महत्त्व को नाकारा नहीं जा सकता. आज हिंदी ब्लोगिंग ने हर खास-ओ-आम को एक दूसरे से जोड़ दिया है और अभिव्यक्ति कि क्रांति के बीज को इस तरह रोपित किया है कि हर तरफ ब्लोग्स कि फसल लहलहा रही है और इसने आज अपनी एक ऐसी पहचान बना ली है जिसे नकारना अब किसी के लिए संभव नहीं. यदि जानना है कैसे तो देखिये यहाँ कैसे अनमोल मोती बिखरे पड़े हैं.

बुलंदशहर के एक गाँव के जन्मे **ओमप्रकाश** यूँ तो साहित्य की सभी विधाओं के महारथी हैं, पर उनकी सबसे पहचान बनी तो वह बाल साहित्य है. अपने ब्लॉग *आखरमाला* (http://omprakashkashyap.wordpress.कॉम और

> *सत्य आसानी से ना स्वीकार्य होता है और ना ही कोई सुनना पसंद करता है पर ये कर्मरथी अपने कार्य में लगा है पूरी निष्ठा और समर्पण से. कभी तो कोई जगेगा ही, कभी तो सत्य को उसकी पहचान मिलेगी.*

संधान(http://opkaashyap.wordpress.com) पर उनके लेखन का प्रमाण मिलता है. वो सिर्फ उपदेशात्मक बाल कवितायें ही नहीं लिखते बल्कि विद्रूपताओं को भी शामिल करते हैं जो उनके सशक्त लेखन का प्रमाण है. आखरमाला में आलोचनात्मक लेखन और संधान में मौलिक रचनायें हैं.

आधा सच aadhasachonline.blogspot.com के चिट्ठाकार **महेंद्र श्रीवास्तव** पेशे से पत्रकार हैं मगर अब एक प्रतिष्ठित टीवी चैनल से जुड़े हैं. मीडिया से जुड़े होने के कारण उन्हें सत्ता के नुमाइंदों को काफी करीब से देखने का मौका मिलता है. इस बारे में उनका कहना है कि हमाम में सब... यानि एक से हैं. इसी सच को शब्दों में ढालने की कोशिश करते हैं जो उनकी पोस्ट्स में परिलक्षित होता है. सच भी ऐसा जो दिल और दिमाग दोनों पर चोट करता है बेशक सच कड़वा होता है जो हर किसी के हलक से नीचे नहीं उतरता मगर सच तो सच ही रहता है चाहे आधा ही क्यूँ ना कहा गया हो.

blogmridulaspoem.blogspot.com ब्लॉग की स्वामिनी **मृदुला प्रधान** का कहना है कि वो कुछ दिमाग के लिए तो कुछ अपनी आत्मा की संतुष्टि के लिए लिखती हैं. जो भी आपको संतुष्ट कर सके वो ही लेखन सार्थक कहलाता है. अब तक उंनकी पांच किताबें छप चुकी हैं. आपके लेखन की खासियत ये है कि वो चाहे रिश्ते हों, परिवार हो या आपसी सम्बन्ध या मन की कोई दशा उसे बहुत खूबसूरती से पिरोती हैं कि पाठक भी आत्मसात कर लेता है. उसे यूँ लगता है जैसे

आसपास ही सब घटित हो रहा है और ऐसा लेखन ही दिलों को छूता है. उनके लेखन की एक बानगी देखिये :

अचानक / सूरज की तेज़ किरणें/ ठहर गयीं / मेरे ऊपर / और / धूप की चमकती / नर्म गर्माहट / मैंने अपनी मुट्ठी में बांध ली / कि / अब, अँधेरा / कभी नहीं होगा...

आशा का संचार करती एक नारी के मनोभावों का प्रकृति के माध्यम से व्यक्त करना ही उनके लेखन की खूबसूरती है.

विशाल चर्चित नए ब्लोगर हैं जो हिन्दी कॉपीराइटर, लेखक व कवि (व्यंग्य) तथा शायर हैं. वे अपने ब्लॉग charchchit32.blogspot.com पर अपने भावों का सागर उंडेलते हैं तथा हर तरह के विचारों को कभी तो शायरी में तो कभी व्यंग्यात्मक लहजे में प्रस्तुत करते हैं और पाठकों का मन मोह लेते हैं.

jindagikeerahen.blogspot.com *ज़िन्दगी की राहें* ब्लॉग **मुकेश कुमार सिन्हा** का है जो कहते हैं जिंदगी की राहें! कभी लगती है, बहुत लम्बी! तो कभी दिखती है बहुत छोटी!! निर्भर करता है पथिक पर, वो कैसे इसको पार करना चाहता है. उनकी एक और कविता *क्वालिटी ऑफ़ लाइफ* के कुछ अंश देखिये :

कर रहे थे मेहनत / जी रहे थे कुछ रोटियों के साथ / जो कभी कभी होती /थी बिना सब्जी के साथ / पर रात की नींद / होती थी गहरी / होती थी / रंग बिरंगे सपने के साथ / पर इन्ही सुनहरे सपनों ने / फिर उकसाया / मेहनत की कमाई / महीने में एक बार मिलता वेतन / नहीं दे पायेगा / ऐश से भरी जिंदगी /कैसे पाओगे / 'क्वालिटी ऑफ़ लाइफ'.

ज़िन्दगी की छोटी-छोटी खुशियाँ ढूंढना और उन्हें शब्दों में पिरोना तो कभी सामाजिक विद्रूपताओं से आहत हो अपने शब्दों में बांधना ही उनके सार्थक लेखन को दर्शाता है.

shabdshikhar.blogspot.com *शब्द शिखर* पर **आकांक्षा यादव** अपने बारे में बताती हैं : *कॉलेज में प्रवक्ता के साथ-साथ साहित्य, लेखन और ब्लागिंग के क्षेत्र में भी प्रवृत्त. देश-विदेश की शताधिक प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं और वेब पत्रिकाओं व ब्लॉग पर रचनाओं का निरंतर प्रकाशन. विकीपीडिया पर भी तमाम रचनाओं के लिंक्स उपलब्ध. दर्जनाधिक प्रतिष्ठित पुस्तकों / संकलनों में रचनाएँ प्रकाशित. आकाशवाणी पोर्टब्लेयर से वार्ता, रचनाओं इत्यादि का प्रसारण. व्यक्तित्व-कृतित्व पर डॉ. राष्ट्रबंधु द्वारा सम्पादित 'बाल साहित्य समीक्षा' (कानपुर) का विशेषांक जारी. विभिन्न प्रतिष्ठित साहित्यिक संस्थानों द्वारा विशिष्ट कृतित्व, रचनाधर्मिता और सतत् साहित्य सृजनशीलता हेतु दर्जनाधिक सम्मान और मानद उपाधियाँ प्राप्त. बिना लाग-लपेट के सुलभ भाव-भंगिमा सहित जीवन के कठोर सत्य उभरें, यही मेरी लेखनी की शक्ति है.*

अब इसके बाद कहने को क्या बचता है. हर पोस्ट में कुछ ना कुछ देने का प्रयास करना और सच के रूपों से परिचित कराना ही आकांक्षा जी लेखनी को उत्कृष्ट और सबसे विशिष्ट बनाता है.

paraavaani.blogspot.com *परावाणी : The Eternal* पोएट्री **अरविन्द पाण्डेय** का ब्लॉग है, जहाँ वो अपने बारे में कहते हैं : *मेरा प्रयास है कि हिन्दी कविता-प्रेमी उस स्वर्ण-युग की स्मृतियों से आनंदित हों जब हिंदी कविता, विश्व की समस्त भाषाओं और साहित्य की गंगोत्री - संस्कृत-कविता से अनुप्राणित और अनुसिंचित होती, अपने स्वर्ण-शिखर पर विराजमान होकर रस-धारा प्रवाहित कर रही थी. अब तक साहित्यकार, साहित्य के स्वरूप की व्याख्या करते आये हैं मगर समस्या यह है कि साहित्य के वर्त्तमान स्वरूप को बदला कैसे जाय.*

हिंदी-साहित्य के छायावादी दृश्य-परिवर्तन के बाद पश्चिम के अपरिपक्व सामाजिक और साहित्यिक दर्शन की नकल करने वालों ने हिन्दी-साहित्य को एक निरुद्देश्य शाब्दिक धंधा बना कर रख दिया. अब आगे की ओर सकारात्मक-गति आवश्यक है क्योंकि कविता ही आज के युग की सर्वाधिक शक्तिमती मुक्ति-दात्री है.

उनके लेखन की बानगी उनके ही शब्दों में देखिये इस कविता में. *महारास : नौ वर्षों की आयु कृष्ण की, सजल-जलद सी काया. / मस्तक पर कुंचित अलकावलि पवन-केलि करती थी. / चारु-चन्द्र-कनकाभ-किरण चन्दन-चर्चा भरती थी. / चन्दन-चर्चित चरण, सृष्टि को शरण-दान करता था. / करुणा-वरुणालय-नयनों से रस-निर्झर बहता था.*

कितनी सुन्दरता, सहजता और सरलता से प्रकृति के श्रृंगार के साथ प्रभु के हास-विलास का चित्रण किया है जो मन को मोह जाता है. जहाँ ना सिर्फ शब्द सौंदर्य है बल्कि भाव प्रधानता भी दृष्टिगोचर होती है जो दर्शाती है कि अरविन्द जी की कथनी और करनी एक जैसी है. जैसा वो चाहते हैं वैसा ही लिख रहे हैं और हिंदी और संस्कृत को एक नयी दिशा देने में प्रयासरत हैं.

feministpoems.blogspot.com **आराधना चतुर्वेदी** का ब्लॉग है. एक औरत के दिल से निकले कुछ शब्द जब दिल से निकल पाठक के अंतस को छूते हैं तो मन के कोने-कोने को भिगो देते हैं. उनके मन के भाव जिस तरह कविता में उतरते हैं वो काबिल-ए-तारीफ हैं, जिसकी एक बानगी उनकी कविता 'दोस्त' में कुछ इस तरह परिलक्षित होती है :

मैं खुद को आज़ाद तब समझूँगी /जब सबके सामने यूँ ही / लगा सकूँगी तुम्हें गले से / इस बात से बेपरवाह कि तुम एक लड़के हो, / फ़िक्र नहीं होगी / कि क्या कहेगी दुनिया ? / या कि बिगड़ जायेगी मेरी 'भली लड़की' की छवि, / चूम सकूँगी तुम्हारा माथा / या कि होंठ /बिना इस बात से डरे / कि जोड़ दिया जाएगा तुम्हारा नाम मेरे नाम के साथ /और उन्हें लेते समय / लोगों के चेहरों पर तैर उठेगी कुटिल मुस्कान / वादा करो मेरे दोस्त!

एक सामाजिक चेतना को जागृत करती उनकी सोच कुछ पल रुक कर सोचने को विवश करती है कि कब हम अपनी रूढ़िवादी सोच से बाहर आकर स्वीकार कर पायेंगे बदलाव को और रिश्तों को उनकी सच्चाई के साथ सहजता से स्वीकार कर पाएंगे.

kaduvasach.blogspot.com **श्याम कोरी उदय** का ब्लॉग यथा नाम तथा गुण को चरितार्थ करता है. वे हर सच को इस तरह से कह जाते हैं कि कडवा होते हुए भी स्वीकारा जाता है. इसका उदाहरण उनकी कविता 'मूकबधिर' में देखा जा सकता है कितनी स्पष्टता और सपाट लहजे में सच को कहते हैं :

तुम / कल भी मूकबधिर थे / आज भी हो / और कल भी रहोगे! / कल की तरह ही -/ कल भी / मैं तुम्हें खरीद लूंगा / धन से -/ या किसी हथकंडे से! /और मैं / फिर से जीत जाऊंगा / चुनाव / राजनीति / सत्ता, और लोकतंत्र!!

सत्य आसानी से ना स्वीकार्य होता है और ना ही कोई सुनना पसंद करता है पर ये कर्मरथी अपने कार्य में लगा है पूरी निष्ठा और समर्पण से. कभी तो कोई जगेगा ही, कभी तो सत्य को उसकी पहचान मिलेगी.■

प्रभुदयाल मिश्र

ग्राम बर्माडांग, जिला टीकमगढ़ मध्यप्रदेश में जन्म. सागर विश्वविद्यालय से अंग्रेजी साहित्य में एम.ए. महर्षि महेश योगी के साथ आध्यात्मिक पुनरुत्थान आन्दोलन के सिलसिले में संपूर्ण भारत यात्रा. मध्य एशिया के तजाकिस्तान और उजवेगिस्तान गणराज्यों में गीता और भारतीय योग पर व्याख्यान. विभिन्न आध्यात्मिक एवं साहित्यिक संस्थाओं से सम्बद्ध. प्रकाशित कृतियां : सौंदर्यलहरी काव्यानुवाद, सबके लिए गीता, उत्तर पथ, मैत्रेयी, वेद की कविता (वैदिक सूक्तों का काव्यान्तर), वेद की कहानियाँ, तंत्र दृष्टि और सौन्दर्य सृष्टि, योग के सात आध्यात्मिक नियम, ईश्वर का घर है संसार. सम्मान : मध्यप्रदेश संस्कृत अकादेमी द्वारा 'व्यास सम्मान', मध्यप्रदेश लेखक संघ द्वारा 'पुष्कर सम्मान', पेंग्विन पब्लिशिंग हाउस द्वारा 'भारत एक्सीलेन्सी एवार्ड', वीरेन्द्र केशव साहित्य परिषद् द्वारा 'महाकवि केशव सम्मान'. सम्प्रति : अध्यक्ष, महर्षि अगस्त्य वैदिक संस्थानम्, भोपाल.

सम्पर्क : ३५, ईडन गार्डन, राजा भोज मार्ग, भोपाल म.प्र. ४६२०१६ ईमेलः prabhu.d.mishra@gmail.com, www.vishwatm.com

सोवियत-रूस में योग

जब मैं सोवियत रूस की त्रिमासीय यात्रा पर प्रस्थान कर रहा था तो मेरे एक मित्र ने मुस्कराते हुए कहा था 'आप एक ऐसे देश में जा रहे हैं जहां ईश्वर की पहचान एक विदेशी वस्तु के रूप में करनी होगी.' सोवियत रूस में लोगों की अध्यात्म विषयक रुचि को लेकर हमारी अब तक की सामान्य धारणा यही है. जाहिर है कि मेरे हर्ष और विस्मय का उस समय पारावार नहीं था, जब मैंने अपने आपको संयोगवश एक दिन ताजिकिस्तान राज्य की राजधानी दुशांबे के 'इरोदा' योग को-आपरेटिव केन्द्र में पाया.

दुशाबे की एक पत्रकार ने जब साक्षात्कार के दौरान मुझसे सबसे पहला सवाल यह पूछा- 'यहां का योग केंद्र आपकी खोज है अथवा इन लोगों ने आपको पा लिया है?' तो मैंने यह उत्तर दिया था कि 'योग का अर्थ तो मिलना ही है, इसलिए हमारा मिलना एक योग ही है.'

इस संयोग की एक विचित्रता भी थी. हमारे एक साथी को सर्दी-जुखाम की समस्या थी. उनकी विशेषज्ञ चिकित्सा ने कुछ लंबे इलाज के बाद उन्हें यहां के स्थानीय योग प्रशिक्षक अब्दुल बहाब साबिर का परिचय दिया. यूं साबिर साहब भी जैसे इस संयोग की प्रतीक्षा ही कर रहे थे.

यह सही है कि सोवियत रूस में ऐसे कार्यक्रम जो किसी धर्म विशेष से जुड़ते हैं सार्वजनिक स्वीकृत व्यवस्था का हिस्सा नहीं है. जब दुशांबे की स्थानीय दूरदर्शन टीम मेरा इंटरव्यू रिकार्ड करने आयी तो उसने पहला प्रश्न यही किया- 'क्या योग का किसी धर्म विशेष से कोई संबंध है?' इस पर मैंने स्पष्ट तौर से यही कहा कि 'योग तो किसी धर्म से भिन्न जीवन को उसकी पूर्णता में जीने की एक वैज्ञानिक कला है.' सोवियत रूस में यदि आज योग अभूतपूर्व लोकप्रियता हासिल कर रहा है तो उसकी पृष्ठभूमि में योग की तात्कालिक स्वास्थ्यगत उपयोगिता के साथ-साथ जीवन को उसकी पूर्णता में जीने की कला कहीं अधिक महत्वपूर्ण है.

'इरोदा' योग केंद्र के प्रशिक्षक श्री अब्दुल बहाब साबिर इस को-आपरेटिव के अध्यक्ष भी हैं. किसी भी सहकारी संगठन का स्वरूप सिद्धांतः आर्थिक होता है व उसके मूल उद्देश्य अपने सदस्यों की आर्थिक आवश्यकता से उत्पन्न हुआ करते हैं. अतः योग को इस 'सहकारी समिति' के स्वरूप को लेकर कुछ भ्रम-सा उत्पन्न हो सकता है, किंतु जैसा कि हम जानते हैं, सोवियत रूस में 'राजकीय' अथवा 'सहकारी' दो व्यवस्थायें ही मूलतः स्थापित व स्वीकृत थी. यूं श्री साबिर को इस को-आपरेटिव को बनाने के लिए कम पापड़ नहीं बेलने पड़े. और यदि इस देश में वहां के अतिशय लोकप्रिय, सशक्त और प्रगतिशील पूर्व राष्ट्रपति मिखाईल गोर्वाचोव की पेरिस्त्रोइका (पुनर्रचना) की प्रक्रिया न चल रही होती तो वे इस प्रकार का संगठन कदापि खड़ा नहीं कर सकते थे. बाद में भी उन्हें अनेक अग्नि परीक्षाओं से गुजरना पड़ा.

योगाभ्यास के समय लगातार चिकित्सक जांच के लिए केंद्र में मौजूद रहते. वे अभ्यास के पूर्व व पश्चात अभ्यासियों

> *सोवियत रूस में भक्ति वेदांत प्रभुपाद का 'हरे राम हरे कृष्ण' आंदोलन हठयोग के बाद लोकप्रियता के दूसरे क्रम में है. साधारणतः इन्हें पता नहीं कि 'कृष्ण' कौन हैं?*

> इन अद्भुत महिलाओं के पास सैकड़ों की संख्या में लोग रोज पहुंचते हैं. इनका कहना था कि जब स्वास्थ्य की समस्या लेकर कोई व्यक्ति उनके पास पहुंचता है तो उन्हें उसकी समस्या व निदान अलौकिक रीति से स्वतः समझ में आने लगता है.

के स्वास्थ्य का परीक्षण करते और जब चार माह की निगरानी के बाद उन्होंने देख लिया कि इससे लोगों को स्वास्थ्यगत लाभ ही हो रहा है तभी उनकी चौकसी खत्म हुई.

जब मैं इस केंद्र में पहुंचा तो श्री साबिर विभिन्न वय के करीब १५-२० स्त्री-पुरुषों और बच्चों को विभिन्न योगासन कराते हुए रूसी भाषा में उसकी विधि भी बता रहे थे. यह देखकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई कि पश्चिमोत्तासन, सर्वांगासन, हलासन, शीर्षासन आदि विभिन्न प्रकार के कठिन आसन, प्राणायाम और मुद्राएं वे बड़ी कुशलता से कर रहे हैं.

सोवियत रूस के इस भाग में योग विषयक साहित्य बहुत सीमित मात्रा में पहुंचा है. श्री साबिर ने किसी परिचित मित्र से श्री धीरेन्द्र ब्रह्मचारी व शिवानंदजी की कुछ हठयोग की सामग्री से नोट्स तैयार किये थे व उनकी लगातार नयी सामग्री पाने की चेष्टा थी. स्थानीय समाचार-पत्रों से जब इस केंद्र में एक भारतीय के उपलब्ध होने की सूचना प्रकाशित हुई तब योग के अनेक वर्षों पुराने अनुयायी भी वहां इकट्ठे होने लगे व उनके पास विस्मयकारी ढंग से अनेक महत्वपूर्ण योग की पुस्तकें मौजूद थीं.

सोवियत रूस में भक्ति वेदांत प्रभुपाद का 'हरे राम हरे कृष्ण' आंदोलन हठयोग के बाद लोकप्रियता के दूसरे क्रम में है. साधारणतः इन्हें पता नहीं कि 'कृष्ण' कौन हैं? ये कृष्ण का चित्र देखकर प्रायः यह मानने को विवश थे कि कृष्ण जरूर स्त्री होंगे. किंतु हमारे मित्र हाकिम शाह की एक इच्छा बहुत तीव्र थी. वह जानना चाहते हैं, 'क्या कभी वह दिन आयेगा जब हम दुशांबे की सड़कों पर हरे राम हरे कृष्ण गाते व नाचते निकल रहे होंगे?' इस पर मेरा उत्तर यही था कि जब यह प्रश्न तुम्हारे मन में उत्पन्न हुआ है, तो यह दिन निश्चित ही है कि बहुत शीघ्र यही होने वाला है. कोई आश्चर्य नहीं कि इस प्रश्न के २ वर्ष बाद ही रूस में साम्यवादी व्यवस्था के समाप्त होते ही तत्संभव बहुत दूर प्रतीत होती वह परिकल्पना भी साकार हो गई.

ये यह नहीं जानते हैं कि शाकाहारी भोजन क्या होता है, किंतु वे इतना जरूर मानते है कि योगाभ्यासी को शाकाहारी होना चाहिये. प्रायः प्रत्येक स्थान पर मुझसे अधिकांश प्रश्न भोजन के इसी पक्ष को लेकर पूछे जाते. वस्तुतः हमारी शाकाहारिता की स्थितियां उनकी कल्पना के बहुत परे की बात है. यह आश्चर्य ही है कि योग की खातिर वे वह सब जानने व मानने की ललक रखते हैं. बहुत से लोग तो इसीलिए शाकाहारी नहीं हो पाये हैं क्योंकि किसी भी माध्यम से वे इन स्थितियों के अनुमान तक नहीं पहुंचे हैं. वे अक्सर मेरी सब्जी व चावल में से मांस कण हटाकर पूरी निश्चितता से मुझे आश्वस्त करते कि 'आपके लिए शाकाहारी भोजन ही रखा गया है.'

दुशांबे के इस योग केन्द्र के अलावा सोवियत रूस की राजधानी मास्को में भी एक केंद्र बखूबी चल रहा है. प्राप्त सूचना के अनुसार इस केंद्र में उत्सुक लोगों की भीड़ लगातार बढ़ रही है. हठयोग के साथ-साथ इन लोगों में मैंने योग के अन्तःपक्ष ध्यान व राजयोग में भी गहन रुचि देखी. अक्सर लोग मुझसे यह सवाल किया करते कि योगाभ्यास से क्या आयु बढ़ायी जा सकती है? इस संबंध में भारतीय योगियों के जीवन वृत्तांत उन्हें बहुत अधिक प्रभावित करते हैं.

मेरे मित्र साबिर ने मुझे ऐसे अनेक लोगों का परिचय दिया जो रूस में स्पर्श या दृष्टि चिकित्सा कर रहे हैं. उन्होंने मुझे ऐसी ही महिलाओं तुर्सुनपाई युपुपवा व सईदा से मिलाया. इन अद्भुत महिलाओं के पास सैकड़ों की संख्या में लोग रोज पहुंचते हैं. इनका कहना था कि जब स्वास्थ्य की समस्या लेकर कोई व्यक्ति उनके पास पहुंचता है तो उन्हें उसकी समस्या व निदान अलौकिक रीति से स्वतः समझ में आने लगता है. इनका विश्वास यह भी था कि यदि वे योगाभ्यास करना सीख जाती हैं तो उनकी शक्तियों में और अधिक वृद्धि की जाकर इन्हें अक्षुण्ण बनया जा सकता है.

मुझे वह घटना विस्मृत नहीं होती है जब 'कम्युनिस्ट ताजिकिस्तान' के संपादक के कमरे में श्री साबिर मुझे ले गये व उन्होंने संपादक से इच्छा व्यक्त की कि वे 'दैनिक जीवन में योग की उपयोगिता' संबंधी मेरी लेखमाला का रूसी में अनुवाद प्रकाशित कराना चाहते हैं. संपादक महोदय को सबसे ज्यादा पछतावा इस बात का था कि जब हम उनके कमरे में पहुंचे तो वे सिगरेट पी रहे थे. 'योग के विपरीत' अपने इस आचरण के बाद भी उनकी इन लेखों को छापने में स्पष्ट रुचि थी.

धीरे-धीरे इस केंद्र में ऐसे लोग इकट्ठे होने, लगे जो कई वर्षों से एकांतिक योग साधना में लगे हुए थे. उन्होंने बड़ी मुश्किल से जुटाई कुछ किताबों, कुछ वृतांतों व कुछ नामों के सहारे अनेक रहस्यपूर्ण अनुभूतियां भी हासिल की हैं व परामानस के गहन स्तरों तक पहुंचे हैं. इनमें सबसे अधिक उल्लेखनीय व्यक्तित्व हैं झेलनोवा वेलेन्तीना जिसका अडिग दावा है कि विश्व के महाकल्याण के लिए 'अग्नि योग' बहुत ही जल्दी सारी दुनिया में छा जायेगा.■

गीता के ये श्लोक **प्रो. अनिल विद्यालंकार** (sandhaan@airtelmail.in) द्वारा रचित गीता-सार से लिए जा रहे हैं, जिसमें गीता के मुख्य विषयों पर कुल १५० श्लोक संगृहीत हैं.

विषय : ज्ञान और ज्ञानी

अव्यक्ताद् व्यक्तयः सर्वाः प्रभवन्त्यहरागमे।
रात्र्यागमे प्रलीयन्ते तत्रैवाव्यक्त-सञ्ज्ञके।।

गीता ८-१८

दिन के प्रारंभ होने पर सारी अभिव्यक्त चीज़ें अव्यक्त से प्रकट होती हैं. और रात्रि होने पर वापस उसी अव्यक्त में विलीन हो जाती हैं.

संसार के सभी पदार्थों का अस्तित्व उनके देखने वाले के संदर्भ में ही अर्थ रखता है. जब हम किसी पदार्थ को देखते हैं तो वह पदार्थ अक्षरशः किसी अव्यक्त स्रोत से प्रकट होता है और तब तक हमारे लिए अस्तित्व रखता है जब तक हम उसे देख रहे होते हैं. (जो हमारा दिन है) और हमारे न देखने पर (जो हमारे लिए उस पदार्थ के प्रति रात है) वह पदार्थ फिर उसी अव्यक्त स्रोत में वापस मिल जाता है. संसार के सभी प्रत्यक्षकर्ताओं के साथ यह प्रतिक्षण होता है, और संसार इसके सभी देखनेवालों को उनकी दृष्टि के अनुसार भिन्न-भिन्न प्रतीत होता है. संसार प्रतिक्षण परिवर्तनशील है और इसे देखने वाले भी प्रतिक्षण बदल रहे हैं. किसी भी व्यक्ति को किसी समय यह संसार कैसा लगेगा यह इस बात पर निर्भर है कि उस समय उसका संसार से किस प्रकार का संबंध है.

अहरागमे : दिन के आने पर, **सर्वाः व्यक्तयः** : सारी अभिव्यक्त चीज़ें, **अव्यक्ताद् प्रभवन्ति** : अव्यक्त से प्रकट होती हैं. **रात्रि-आगमे** : रात्रि के आने पर, **तत्र एव** : उस ही, **अव्यक्तसंज्ञके** : अव्यक्त नामवाले तत्त्व में, **प्रलीयन्ते** : विलीन हो जाती हैं.

सर्वतः पाणिपादं तत् सर्वतोऽक्षि-शिरोमुखम्।
सर्वतः श्रुतिमल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठति।।

गीता १३-१३

परमात्मा के सभी स्थानों पर हाथ, पैर, आँख, सिर, मुख और कान हैं, और वह विश्व की सभी चीज़ों को व्याप्त कर स्थित है.

सभी धर्म ईश्वर को सर्वव्यापक और सर्वशक्तिमान मानते हैं. वह सभी जगह है और सभी जगह अपने पूर्ण रूप में है. इसलिए संसार के प्रत्येक स्थान पर उसकी आँख, कान, हाथ, पैर आदि हैं. दूसरे शब्दों में संसार के प्रत्येक प्राणी के आँख, कान आदि मानो ईश्वर के ही अंग हैं. उन सभी के माध्यम से ईश्वर ही संसार को देख रहा है, इसमें गति कर रहा है और इसे भोग रहा है. यह दृष्टि एक ओर ईश्वर की सर्वव्यापकता के प्रति हमें विनीत बनाती हैं तो दूसरी ओर सभी प्राणियों की और स्वयं अपनी प्रत्येक गतिविधि में ईश्वर की सत्ता को समझने के लिए भी दिशा देती है.

तत् : वह परमात्मा, **सर्वतः पाणिपादं** : सर्वत्र हाथ और पैर वाला है, **सर्वतः अक्षिशिरोमुखम्** : सभी जगह आँख, सिर और मुख वाला है, **सर्वतः श्रुतिमत्** : सर्वत्र कानों वाला है, और वह, **लोके** : इस संसार में, **सर्वम् आवृत्य तिष्ठति** : सभी कुछ को आविष्ट कर स्थित है.

नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः।
उभयोरपि दृष्टोऽन्तः त्वनयोः तत्त्वदर्शिभिः।।

गीता २-१६

जो नहीं है वह अस्तित्व में नहीं आ सकता, जो है उसका अभाव नहीं हो सकता. तत्त्व को जाननेवाले ज्ञानियों ने इन दोनों (भाव और अभाव) के अंतिम रूप को देख लिया है.

निरंतर परिवर्तनशील प्रकृति के पीछे अंतिम सत्य क्या है इसे जानने में वैज्ञानिकों को भी कठिनाई हो रही है. गीता के अनुसार सत्य वह है जो सदा रहा है और सदा रहेगा. समुद्र के रूपक के आधार पर कहें तो हम देखते हैं कि समुद्र में हर समय असंख्य लहरें उठती रहती हैं. ये लहरें उत्पन्न होती हैं, बढ़ती हैं, समुद्र की सतह पर यात्रा करती हैं और फिर वापस समुद्र में मिल जाती हैं. पर उनमें से प्रत्येक लहर उस समुद्र की ही अभिव्यक्ति है जो उनके सतही खेल के पीछे विद्यमान स्थायी सत्य है. जो कुछ हमें संसार में किसी भी समय दिखाई देता है वह वही है जो सदा से विद्यमान रहा है. संसार के सभी परिवर्तनों में अपरिवर्तनशील सत्य ही अभिव्यक्त हो रहा है.

असतः : जो नहीं है उसका, **भावः न विद्यते** : अस्तित्व नहीं होता, **सतः** : जो है उसका, **अभावः न विद्यते** : अभाव नहीं हो सकता, **तत्त्वदर्शिभिः** : तत्त्व के ज्ञानियों ने, **उभयोः अपि अनयोः** : इन दोनों का ही, **अन्तः दृष्टि** : अंतिम सत्य देख लिया है.

समं सर्वेषु भूतेषु तिष्ठन्तं परमेश्वरम्।
विनश्यत्सु अविनश्यन्तम् यः पश्यति स पश्यति।।

गीता १३-२७

संसार के सभी प्राणी नाशवान् हैं, किन्तु उन सभी के अन्दर अविनाशी परमात्मा समान रूप से स्थित है. जो मनुष्य इस बात को देखता है वही वास्तव में देखता है.

जिस प्रकार समुद्र में रहनेवाली मछलियों को समुद्र तक पहुँचने के लिए कहीं और नहीं जाना पड़ता उसी प्रकार परमात्मा सब प्राणियों को समान रूप से उपलब्ध है. उसके लिए कोई प्राणी छोटा या बड़ा नहीं है. वह सबको समान भाव से देखता है. क्योंकि परमेश्वर सर्वव्यापक है इसलिए संसार के सभी प्राणी उसी में पैदा होते हैं, उसमें ही अपना जीवन जीते हैं, और अंत में उसी में विलीन हो जाते हैं. प्राणी और पदार्थ आते-जाते रहते हैं, उनके नष्ट होने पर भी अविनाशी परमात्मा नित्य रूप में विद्यमान रहता है. शरीर की मृत्यु होती है पर आत्मा अमर रहती है. आत्मा परमात्मा का ही अंश है और इस प्रकार हर प्राणी की आत्मा के रूप में परमात्मा ही उसके अन्दर विद्यमान है.

सर्वेषु भूतेषु : सब प्राणियों में, **समं तिष्ठन्तम्** : समान रूप से स्थित, और, **विनश्यत्सु** : नष्ट होते हुओं में, **अविनश्यन्तम्** : नष्ट न होनेवाले, **परमेश्वरम्** : परमेश्वर को, **यः पश्यति स पश्यति** : जो देखता है वही वास्तव में देखता है.■

पंचतंत्र कई दृष्टियों से संसार की सर्वाधिक लोकप्रिय कृतियों में से एक है। इसमें संकलित कहानियों का मूल उत्स लोक-जीवन है। भारतीय कृतियों में पंचतंत्र ऐसी अकेली रचना है, जिसे पूरी तरह ज्ञानकोश कहा जा सकता है। कथा प्रस्तुति की जो शैली इसमें प्रयुक्त है, उसकी एक लंबी परम्परा है। 'वेद', 'ब्राह्मण' आदि ग्रंथों में भी इस फैंटेसी का प्रयोग हुआ है।

धीरज कबहुं न छाड़िए जब लौ घट में प्रान

विष्णु शर्मा ने कहा, "जो लोग मौका पड़ने पर घबराते नहीं, जिनका सिर विपत्ति में भी नहीं चकराता, वे विपत्ति से उसी प्रकार छूट जाते हैं जैसे रक्तमुख नामक बानर छूटा."

कहते हैं किसी समुद्र के किनारे एक बहुत बड़ा जामुन का पेड़ था. वह बारहों मास फलों से लदा रहता था. उस पर एक ललमुहा बानर रहता था. उसका नाम था रक्तमुख. एक दिन करालमुख नामक एक घड़ियाल समुद्र से निकलकर उस पेड़ के नीचे की बालू पर आकर पसर गया.

उसे देखकर रक्तमुख ने कहा, "आप मेरे यहां अतिथि के रूप में पधारे हैं. आप का स्वागत-सत्कार करना मेरा धर्म है. कहते हैं, यदि कोई संझौती के समय द्वार पर आ जाए तो वह मित्र हो या शत्रु, मूर्ख हो या पंडित, उसका जी-जान से स्वागत-सत्कार करने से प्राणी मरने के बाद सीधे स्वर्ग ही जाता है."

उस बंदर को धर्मशास्त्र लिखने वालों के विचारों का भी पता था इसलिए उसने अपना ज्ञान बघारते हुए कहा, "मनु महाराज का तो कहना है कि श्राद्ध के समय या संझौती के बाद आए हुए अतिथि से यह भी नहीं पूछना चाहिए कि आप की शाखा क्या है, गोत्र क्या है, वंश क्या है और आपने कितनी विद्या पाई है. उनकी बात गलत तो हो नहीं सकती, और यदि सही है, तो यदि कोई अतिथि दूर से आया हुआ हो, थका हुआ हो, या संझौती के बाद भोजन के समय आया हो तो उसकी सेवा करने से आदमी को मरने के बाद परम पद मिलता है. और जिस आदमी के दरवाजे से कोई अतिथि दुखी होकर उसांसे लेता हुआ लौट जाता है उसके घर से पितरों की आत्माएं और देवता भी रूठकर चले जाते हैं. सो आप मेरे अतिथि हैं.

मेरे पास और कुछ तो है नहीं, ये अमृत समान फल ही हैं. आप इन्हें ही पेट भर खाइए." यह कहकर उसने जामुन की डाल को झकझोरा तो नीचे फलों की बरसात सी हो गई.

उस घड़ियाल ने तो इतने मधुर फल जीवन में कभी खाए ही नहीं थे. उसे खूब मजा आया. फल खाने के बाद दोनों में देर तक तरह-तरह की बातें होती रहीं. फिर घड़ियाल खिसककर पानी में चला गया.

अब वह रोज उस पेड़ के नीचे आने लगा और बंदर उसे जामुन के फल खिलाने लगा. इस तरह दोनों में बहुत गहरी दोस्ती हो गई. उनको किसी की निंदा-चुगली में कोई रुचि नहीं थी. उन्होंने लगता है बुद्ध का वचन भी कहीं पढ़ सुन लिया था कि यदि किसी से चर्चा करो तो धर्म की चर्चा करो, नहीं जो जबान बिल्कुल खोलो ही नहीं. उनको शास्त्रों और

> *कहते हैं, यदि कोई संझौती के समय द्वार पर आ जाए तो वह मित्र हो या शत्रु, मूर्ख हो या पंडित, उसका जी-जान से स्वागत-सत्कार करने से प्राणी मरने के बाद सीधे स्वर्ग ही जाता है.*

स्मृतियों की चर्चा में कुछ खास ही मजा मिलता था. दोनों देर-देर तक इनको लेकर बातें करते रहते थे. घड़ियाल पेट भर कर जामुन तो खाता ही था, कुछ जामुन अपनी घरवाली के लिए भी ले जाया करता था.

एक दिन उसकी घरवाली ने पूछा, "प्राणनाथ, आप इतने मीठे जामुन के फल लाते कहां से हैं?"

घड़ियाल ने बता दिया कि उसका मित्र रक्तमुख उसे बड़े प्रेम से ये फल देता है.

घड़ियालिन तो ठहरी औरत की जाति. उसने सोचा जो बंदर इतने सुंदर और अमृत जैसे मीठे फल रोज खाता रहता है उसका कलेजा तो और भी मीठा और सचमुच अमृत के समान होगा. उसने घड़ियाल से कहा, "यदि तुम्हें मुझसे सचमुच प्रेम है तो जिस भी तरह से हो मुझे उस बंदर का कलेजा लाकर दो जिससे उसे खाकर मैं अमर हो जाऊं और हम-तुम दोनों अनंत काल तक मौज़-मस्ती करते रह सकें."

घड़ियाल ने उसे समझाया, "मैं उसे अपना भाई मान चुका हूं. उसका हमारे प्रति इतना प्रेम है. वह फल देकर

> *देखो, आज तक तुमने मेरी एक भी बात कभी टाली नहीं थी. आज तुमको क्या हो गया है. मुझे तो लगता है वह बंदर नहीं बंदरिया है और तुम उसी के चक्कर में पूरा दिन वहीं बिता देते हो. अब मैं तुम्हें अच्छी तरह समझ गई. तुम्हारे सारे लक्षण इसी बात के गवाह हैं.*

हमारे ऊपर इतना उपकार करता आया है और हम उल्टे उसकी जान के पीछे पड़ जाएं. तुम इस तरह की बात फिर से जबान पर लाना भी नहीं."

घड़ियाल को शास्त्रों का जितना ज्ञान हो चुका था उसके अनुसार उसने समझाया कि भाई दो तरह के होते हैं. एक वह जो मां की कोख से जन्म लेता है दूसरा वह जो वचन देकर बनाया जाता है. इन दोनों भाइयों में दूसरा पहले से अधिक श्रेष्ठ होता है.

पर घड़ियालिन तो एक सिरफिरी थी. जो ठान लिया सो ठान लिया, जहां अड़ गई वहां अड़ गई. उसने कहा, "देखो, आज तक तुमने मेरी एक भी बात कभी टाली नहीं थी. आज तुमको क्या हो गया है. मुझे तो लगता है वह बंदर नहीं बंदरिया है और तुम उसी के चक्कर में पूरा दिन वहीं बिता देते हो. अब मैं तुम्हें अच्छी तरह समझ गई. तुम्हारे सारे लक्षण इसी बात के गवाह है. तुम मेरे सवालों को टालने की कोशिश कर रहे हो. मेरी चाह भी पूरी नहीं कर रहे हो. आजकल रातों के समय तुम इस तरह गर्म सांसें लेते हो जैसे उनसे आग निकल रही हो और मुझे गले से लगाकर चूमते भी नहीं हो. तुम लाख बहाना बनाओ यह बात मुझसे छिपी नहीं रह गई है कि तुम्हारा मन किसी दूसरी लुगाई पर लट्टू हो रहा है."

घड़ियालिन क्रोध के मारे लगी हाथ-पांव पटकने. घड़ियाल उसके पांव पकड़ कर, हाथ जोड़कर, उसे बांहों में भर कर मिन्नतें करता रहा, "मेरी जान, मैं तुम्हारे पांव पड़ता हूं. चाहो तो मैं उम्र भर तुम्हारी गुलामी करने को भी तैयार हूं. तुम अपना यह गुस्सा छोड़ दो."

पति की बातें सुनकर घड़ियालिन बिफर उठी. वह फफक-फफक कर रोने लगी. कहने लगी, "अरे धोखेबाज, तेरे मन पर तो तेरी उस चहेती ने जादू कर रखा है, जो नाज नखरे दिखा कर तुझे बहलाती रहती है. तुम आजकल दिन-रात उसी की बातें सोचते रहते हो और उसी से मिलने के लिए छटपटाते रहते हो. तुम्हारे दिल में मेरे लिए कोई जगह है ही नहीं. तुम यह नाटक दिखा कर मुझे और धोखे में नहीं रख सकते. मेरे पावों पड़ने की कोई जरूरत नहीं है."

घड़ियाल ने उसे समझाया कि वह उसका भरम है. वह उसे छोड़कर न तो किसी दूसरी से प्यार करता है, न ही कर सकता है. वह जिसके पास जाता है वह बंदर है, बंदरिया नहीं.

घड़ियालिन मानने को तैयार ही नहीं थी. वह तुनक कर बोली, "तुम कहते हो कि वह तुम्हारी चहेती बंदरिया नहीं है तो फिर मेरे सामने उसे लाकर खड़ा क्यों नहीं कर देते. यदि वह सचमुच बानर है तो उससे दोस्ती करने का क्या मतलब? उसके लिए तुम्हारे मन में इतना प्यार क्यों उमड़ा रहता है? मैं अधिक तो कुछ कहती नहीं, पर यदि तुमने आज ही लाकर उसका कलेजा नहीं दिया तो यह समझ लो कि इसके बाद मैं न कुछ खाऊंगी, न पिऊंगी और भूख-प्यास से तड़प कर अपनी जान दे दूंगी."

ठीक ही कहा है कि वज्रलेप, मूर्ख, औरतें, केंकड़े, मछली, नीला रंग और शराबी एक जैसे होते हैं. ये जिसे एक बार पकड़ लेते हैं, छोड़ने का नाम नहीं लेते.

बेचारे घड़ियाल को सूझ ही नहीं रहा था कि वह करे तो क्या करे. वह सोचता जा रहा था कि इतने अच्छे मित्र की जान वह ले कैसे सकता है. उसे इतना विकल और उदास देखकर बंदर ने पूछा, "मित्र, तुम आज इतने दिनों के बाद दिखाई दिए और मिले भी तो इतने उदास और परेशान. आखिर बात क्या है? तुम तो आते ही सूक्तियों की झड़ी लगा दिया करते थे और आज इस तरह मुंह लटकाए हुए हो. कुछ मैं भी तो सुनूं कि तुम्हें परेशानी किस बात की है."

घड़ियाल ने कहा, "क्या बताऊं दोस्त. आज मेरी घरवाली मेरे ऊपर बिगड़ कर मुझे बहुत उल्टा सीधा सुनाने लगी. कहने लगी, 'एक तो तुम्हारा मित्र है जो तुम्हें रोज इतने मीठे फल खिलाता है और दूसरे तुम हो कि उसे कभी एक बार को भी घर नहीं ला सके कि मैं उसका स्वागत-सत्कार कर सकूं. आखिर हमारा भी कुछ कर्तव्य होता है या नहीं. मुझे लगता है कि तुमको मुफ्तखोरी की आदत पड़ती जा रही है. तुम एक नंबर के कृतघ्न हो."

"उसने मुझे झिड़ते हुए कहा, तुम्हें पता है दुनिया के हर एक पाप का कोई न कोई प्रायश्चित है पर कृतघ्नता का कोई प्रायश्चित नहीं है. अपनी बात के प्रमाण में उसने शास्त्र की भी एक मिसाल दुहरा दी कि कोई ब्रह्महत्या कर दे, शराबी हो, चोर हो, व्रत तोड़ बैठा हो या स्वभाव से ही दुष्ट हो तो उसके दोषों का प्रायश्चित है पर किसी कृतघ्न के लिए किसी प्रायश्चित तक का विधान नहीं है."

उसने मुझे कसम देकर कहा कि आज तुम मेरे देवर को लेकर ही घर लौटोगे नहीं तो मैं जान दे दूंगी.

उसकी बात सुनने के बाद अब मैं तुम्हारे पास आया हूं. यदि तुमने नहीं कर दिया तब तो मैं कहीं का न रह जाऊंगा. इतने दिनों तक तुम्हारे पास न आने का भी यही कारण था. अब तुम झटपट तैयार हो लो और मेरे साथ चल दो. तुम्हारी भाभी व्यंजन पकवान बनाकर, सज धज कर तुम्हारी राह देख रही होगी.

बंदर बोला, "भाभी ने बात तो ठीक ही कही है. कहा भी गया है कि मनुष्य को ऐसों का साथ छोड़ देना चाहिए जो उसी तरह सब कुछ अपनी तरफ ही खींचने के चक्कर में रहते हैं जैसे जुलाहा बानों को अपनी ही ओर खींचता रहता है. ऐसे लोग किसी से सच्चा प्रेम नहीं करते. लोभ के कारण हमेशा दोस्तों को चूसने के चक्कर में ही रहते हैं."

फिर प्रेम के तो छह लक्षण बताए गए हैं. ये हैं मित्र को कुछ देना, मौका पड़ने पर उससे लेना, अपनी गोपनीय बातें भी उसे बताना और उसकी गोपनीय बातों के बारे में पूछताछ करना, मित्रों को खिलाना-पिलाना और स्वयं उनके यहां खाना-पीना.

"मनुष्य को ऐसों का साथ छोड़ देना चाहिए जो उसी तरह सब कुछ अपनी तरफ ही खींचने के चक्कर में रहते हैं जैसे जुलाहा बानों को अपनी ही ओर खींचता रहता है. ऐसे लोग किसी से सच्चा प्रेम नहीं करते. लोभ के कारण हमेशा दोस्तों को चूसने के चक्कर में ही रहते हैं."

"लेकिन एक ही गड़बड़ है. मैं ठहरा शाखाचारी और आप जलविहारी. इसलिए मैं आपके घर में तो जा नहीं सकता. अच्छा हो आप भाभी जी को ही यहां ले आएं. मैं उनको यहीं नमस्कार करके उनका आशीर्वाद ले लूंगा."

घड़ियाल ने कहा, "मित्र, मेरा घर जल के भीतर नहीं, समुद्र के बीच एक बहुत सुंदर टापू पर है. तुम मेरी पीठ पर बैठकर वहां तक चलना. मेरे रहते तुम्हें तैरना जानने की क्या जरूरत."

घड़ियाल तो बंदर का दोस्त ठहरा. उसकी बात पर बंदर को किसी तरह का संदेह हो ही नहीं सकता था. उसने कहा, "फिर क्या है. आपको बहुत पहले ही बताना था. इतनी देर क्यों कर बैठे, पहले ही आ गए होते. चलिए अभी चलता हूं."

यह कहकर बंदर नीचे उतर आया और घड़ियाल की पीठ पर सवार होकर बोला, "लीजिए, मैं आप की पीठ पर सवार भी हो गया. चलिए, कहां चलना है."

बंदर को लेकर घड़ियाल समुद्र के भीतर चल पड़ा. घड़ियाल तेजी से तैरता जा रहा था. बंदर को समुद्र की लहरों से डर लग रहा था, पर घड़ियाल तो उसे डर से सिकुड़ा देखकर मन ही मन प्रसन्न हो रहा था. बंदर ने कहा, "भाई, इतनी तेजी से न चलो. मुझे डर लग रहा है. यदि लुढ़क गया तो गया काम से."

घड़ियाल उसकी बात सुनकर भीतर ही भीतर मुस्कराया. अब वह निश्चिंत था कि बंदर अब लाख जतन करे, छूटकर भाग तो सकता नहीं. उसने सोचा, इतने दिनों का साथ रहा है इसलिए अब तो बता ही देना चाहिए कि मैं इसे क्यों और कहां लिए जा रहा हूं. बेचारा और कुछ नहीं तो कम से कम अपने देवी-देवताओं को तो याद कर ले. घड़ियाल ने कहा, "मित्र, अब अपने प्राणों की चिंता क्यों करते हो. वे तो होते हुए भी जा चुके हैं. मैं तो अपनी घरवाली के कहने से

तुम्हें ले ही इसलिए जा रहा हूं कि तुम्हें मारकर तुम्हारा कलेजा निकाल कर उसका व्रत तोड़ सकूं. अब तुम अपने किसी देवी-देवता का सुमिरन करना चाहो तो खुशी से कर लो."

बंदर ने कहा, "भाई, मैंने आप का क्या बिगाड़ा है जो आप मेरे साथ ऐसा बर्ताव करने जा रहे हैं."

घड़ियाल ने सारी कहानी बयान कर दी. घड़ियाल से यह सुनकर कि उसकी घरवाली बंदर का कलेजा अमर होने के लिए खाना चाहती है, बंदर ने समझ लिया कि स्वर्ग और अमरता चाहने वाले इन्हें पाने के लिए आदमी होते हुए भी हैवानों की तरह बर्ताव करने लगते हैं. उन्हें न भाई दिखाई देता है न पड़ोसी, न मां न बाप, न देश न दुनिया. वे किसी के भी साथ दगा करके अपना मतलब पूरा करने की कोशिश कर सकते हैं, भले ही उन्हें अंत में पता चले कि खुदा और बिसाले सनम में से कुछ भी नहीं मिला और वे न तो इधर के रह गए न उधर के हो सके. घड़ियाल बेचारा तो जानवर था. पर बंदर यह भी जानता था कि स्वर्ग और अमरता में विश्वास रखने वाले अक्ल के इतने कच्चे होते हैं कि उनको कुछ भी उल्टा-सीधा पढ़ाया जा सकता है. उसने छूटते ही जवाब दिया, भाई मेरे, यदि यह बात थी तो यह आप ने वहीं बता दिया होता. मैं अपने साथ अपना कलेजा भी तो लेता आया होता. मैंने तो चलते समय उसे जामुन के पेड़ पर एक कोटर में छिपा दिया था. आप की तनिक-सी चूक से भाभी की इच्छा पूरी नहीं हो पाएगी. आप ने बताया होता तो मैं तो अपनी भाभी को अपनी ओर से ही अपना कलेजा भेंट कर देता.

> "समझदार लोगों की नसीहत अब उसे याद आ रही थी कि जो आदमी भरोसे का न हो उस पर तो भरोसा करना ही नहीं चाहिए, भरोसे योग्य मनुष्य पर भी बहुत अधिक भरोसा नहीं करना चाहिए."

उसकी बात सुनकर घड़ियाल चकरा गया. उसने कहा, "इसमें क्या रखा है, मैं अभी तुम्हें वापस लिए चलता हूं. तुम कोटर से कलेजा निकाल कर मुझे दे देना और मैं इसे अपनी दुष्ट पत्नी को दे दूंगा. वह इसे पाकर अपना अनशन तो तोड़े."

अब वह घड़ियाल बंदर को लेकर फिर समुद्र के किनारे पहुंचा. बंदर छलांग लगा कर पेड़ पर चढ़ गया और परमात्मा को धन्यवाद देने लगा. उसके बड़े भाग्य थे जो उसके प्राण बच गए. समझदार लोगों की नसीहत अब उसे याद आ रही थी कि जो आदमी भरोसे का न हो उस पर तो भरोसा करना ही नहीं चाहिए, भरोसे योग्य मनुष्य पर भी बहुत अधिक भरोसा नहीं करना चाहिए.

वह उधर इस तरह सोच रहा था और इधर घड़ियाल बेचैन हो रहा था कि अभी तक वह कर क्या रहा है. जब घड़ियाल से नहीं रहा गया तो उसने कहा, "भाई मेरे, अपना वह कलेजा तो दे दो जिसे खाकर तुम्हारी भाभी अपना अनशन तोड़ने वाली है."

अब बंदर के हंसने की बारी थी. उसने कहा, "मूर्ख! विश्वासघाती! क्या कोई अपना कलेजा निकालकर अपने शरीर से बाहर रख सकता है? अब तू यहां से चला जा और फिर कभी मुझे अपना काला मुंह न दिखाना. कहते हैं यदि पुराना मित्र ही शत्रु हो जाए तो उसके ऊपर दुबारा विश्वास करके उसे मित्र बनाना खतरनाक है. ऐसा आदमी गर्भ धारण करने वाली खच्चरी की तरह अपनी मूर्खता से अपनी मौत खुद बुलाता है."

बंदर की झिड़की सुनकर वह घड़ियाल पानी-पानी हो गया. मन ही मन सोचने लगा, मैं भी कितना मूर्ख हूं. मुझे अपने मन की बात इसे बताने की क्या पड़ी थी. बना हुआ काम अपनी मूर्खता से बिगाड़ लिया. फिर भी कोशिश करके तो देख ही लेना चाहिए. हो सकता है वह दुबारा झांसे में आ जाए. यह सोचकर उसने बंदर से कहा, "अरे यार, मैं तो तुम्हारी मित्रता की परीक्षा ले रहा था. अब मेरी समझ में आ गया कि तुम कितने डरपोक हो. तुम्हारी भाभी को तुम्हारे कलेजे का क्या करना है. तुम निडर होकर मेरे खास मेहमान बनकर मेरे घर चलो. तुम्हारी भाभी तुम्हारी राह देख रही होगी."

उसकी बात पर बानर ने कहा, "कमीने, तू यहां से चला जा. मैं अब तेरी बातों में नहीं आने वाला. यह तो मानी हुई बात है कि भूखा आदमी कोई भी पाप कर सकता है. मरियल लोग निर्दयी होते हैं. 'हे प्रिये, प्रियदर्शन नाम के सांप से कह दो कि अब गंगदत्त फिर कुएं में भूल कर भी नहीं जाएगा.'

घड़ियाल ने कहा, "तुम्हारी बात मेरे पल्ले नहीं पड़ी."

बंदर ने पूरी कहानी सुना दी.■

महर्षि वेद व्यास

वैदिककालीन ऋषि वेद व्यास की रचना महाभारत की गणना भारतीय साहित्य-भंडार के सर्वश्रेष्ठ महाग्रंथों में की जाती है। इसमें पांडवों की कथा के साथ अनेक सुन्दर उपकथाएँ हैं तथा बीच-बीच में सूक्तियाँ एवं उपदेशों के उज्जवल रत्न भी जुड़े हुए हैं। महाभारत एक विशाल महासागर है जिसमें अनमोल मोती और रत्न भरे पड़े हैं। रामायण और महाभारत भारतीय संस्कृति और धार्मिक विचार के मूल स्रोत माने जा सकते हैं।

पहला दिन

अक्सर कौरवों की सेना के अग्रभाग पर दुःशासन ही रहा करता था और पांडवों की सेना के आगे भीमसेन. वीरों के गर्जन, शंखों के बजने की तुमुल ध्वनि, विविध बाजों का शब्द, भेरियों का भैरवनिनाद, घोड़ों का हिनहिनाना, हाथियों का चिंघाड़ना आदि सभी शब्दों ने मिलकर आकाश को गुंजा दिया था. बाणों को 'सांय-सांय' करते जाते देख ऐसा प्रतीत होता था मानो आकाश से तारे टूट रहे हों. बाप ने बेटे को मारा. बेटे ने पिता के प्राण लिये. भानजे ने मामा का वध किया. मामा ने भानजे का काम तमाम किया. युद्ध का यह दृश्य था.

पहले दिन की लड़ाई में भीष्म ने पांडवों पर ऐसा हमला किया कि पांडव-सेना थर्रा उठी. पितामह का रथ जिधर चला, उधर ही कालदेव का भयंकर नृत्य-सा होने लगा. सुभद्रा-पुत्र अभिमन्यु यह देखकर क्रोध में आ गया और उसने वृद्ध पितामह का बढ़ना रोका. दोनों पक्ष के वीरों में से सबसे छोटे बालक अभिमन्यु को, सबसे वयोवृद्ध धनुर्धारी भीष्म से भिड़ते देखकर देवता लोग भी मुग्ध हो गये.

अभिमन्यु का रथ आगे बढ़ा. उसकी ध्वजा पर सोने का कर्णिकार वृक्ष चित्रित था. अभिमन्यु ने कृतवर्मा पर एक बाण चलाया, शल्य पर पांच और भीष्म पर नौ बाण मरे. एक और बाण से दुर्मुख के सारथी का सिर धड़ से अलग गिरा दिया. दूसरे बाण से कृपाचार्य के धनुष को नष्ट कर दिया. अभिमन्यु की यह युद्ध-कुशलता देखकर देवताओं ने फूल बरसाये. भीष्म और उनके अनुगामी वीरों ने सुभद्रा-पुत्र की भूरि-भूरि प्रसंसा की और कहा कि यह तो पिता के ही समान वीर है.

इसके बाद कौरव-वीरों ने अभिमन्यु के चारों ओर से घेर लिया और एक साथ उस पर बाणों की बौछार कर दी. किंतु अभिमन्यु इससे तनिक भी विचलित नहीं हुआ. भीष्म ने जितने बाण मारे उन सबको अभिमन्यु ने अपने बाणों से काटकर उड़ा दिया. एक बाण उसने ऐसा निशाना तानकर मारा कि जिससे भीष्म के रथ की ध्वजा कट गई. भीष्म के रथ की ध्वजा कटी देखकर भीमसेन का दिल बांसों उछल पड़ा और वह सिंह की भांति दहाड़ उठा. काका की गरज सुनकर भतीजे का मन और दुगुना बढ़ गया.

सुकुमार बालक की इस अद्भुत रण-कुशलता को देखकर पितामह का मन भी अभिमान एवं आनंद से फूल उठा. उनको खेद हुआ कि मुझ बूढ़े को अपनी सारी शक्ति लगाकर अपने पोते से लड़ना पड़ रहा है. यह सोचकर वह बड़े व्यथित हुए. फिर भी अपना कर्तव्य समझकर बालक पर बाणों की बौछार करने लगे. यह देखकर विराट, उत्तर धृष्टद्युम्न, भीमसेन आदि पांडव-पक्ष के वीरों ने आकर चारों ओर से अभिमन्यु को घेरकर अपने बीच में ले लिया और सबने भीष्म पर जोरों

श्वेत की गदा के वार से भीष्म का रथ चूरचूर होकर बिखर गया. भीष्म क्रोध के मारे आपे से बाहर हो गये और एक बाण खींचकर श्वेत पर जोर से दे मारा. बाण के लगते ही विराट-कुमार श्वेत के प्राण-पखेरू उड़ गये. यह देख दु:शासन बाजे बजाता हुआ नाच उठा. इसके बाद भी भीष्म ने पांडवों की सेना में भयंकर प्रलय मचा दी.

का हमला कर दिया. इसका नतीजा यह हुआ कि भीष्म को अभिमन्यु की तरफ से ध्यान हटाकर इन लोगों से अपना बचाव करना पड़ गया.

विराटराज-पुत्र कुमार उत्तर हाथी पर सवार होकर शल्य से आ भिड़ा. शल्य के रथ के चारों घोड़े हाथी के पांव के नीचे आ गये और कुचल कर मर गये. यह देखकर मद्रराज बड़े जोश में आ गये और अपना शक्ति नामक हथियार उत्तर पर चला दिए. वह अस्त्र उत्तर का कवच भेदकर उसकी ठीक छाती के अंदर जा लगा. उसके हाथ से अंकुश और तोमर छूटकर गिर गये और हाथी के मस्तक पर से राजकुमार उत्तर का मृत शरीर पृथ्वी पर लुढ़क पड़ा.

उत्तर के स्वर्ग सिधार जाने पर भी उसके हाथी ने शल्य पर धावा करना न छोड़ा. मद्रराज में और उत्तर के हाथी में ऐसी भीषण भिड़ंत हुई कि देखते ही बनता था. शल्य ने खड्ग का प्रहार करके हाथी की सूंड काटकर गिरा दी. इस पर भी हाथी का जोश ठंडा न हुआ. यह देखकर शल्य ने उसके मर्म-स्थानों को बाणों से बींध डाला और तब वह हाथी भयानक चिंघाड़ के साथ गिर पड़ा.

विराटराज के जेष्ठ पुत्र श्वेत ने दूर से देखा कि उसके छोटे भाई को शल्य ने मार डाला, इससे उसे अपार क्रोध हो गया. क्रोध के मारे वह ऐसा लाल हो उठा जैसे घी डालने से अग्नि प्रज्वलित हो उठती है. राजकुमार ने अग्नि-ज्वाला की भांति मद्रराज के रथ पर हमला कर दिया. कुमार श्वेत के हाथों शल्य की कहीं मृत्यु न हो जाये, इस भय से सात रथियों ने मद्रराज को अपने घेरे में ले लिया. उन सातों ने रथ पर से श्वेत पर उजले बाणों की बौछार की तो ऐसा प्रतीत हुआ जैसे काले-काले बादलों पर असंख्य बिजलियां कौंध रही हों. श्वेत तनिक भी विचलित न हुआ. उसने अपने बाणों के प्रहारों से कौरव-वीरों के तेज धनुष काट डाले. इस पर सातों वीरों ने सात शक्तियों का श्वेत पर प्रयोग किया. श्वेत ने इसे सात भाले फेंककर उन शक्तियों के टुकड़े कर दिये. श्वेत ने ऐसी वीरता दिखाई कि स्वयं कौरव वीर भी विस्मित रह गये. इतने में शल्य को आफत में फंसा देखकर दुर्योधन एक भारी सेना लेकर उनकी रक्षा के लिये चला. इस सेना में और पांडव सेना में भयानक युद्ध छिड़ गया. हजारों वीर खेत रहे. असंख्य रथों के धुर्रे उड़ गये. हजारों की संख्या में हाथी और घोड़े ढेर होकर गिर पड़े. श्वेत ने दुर्योधन की सेना की धज्जियां उड़ा दीं और उसे तितर-बितर करके भीष्म पर ही वार कर दिया और दोनों में घमासान युद्ध होने लगा.

राजकुमार श्वेत ने भीष्म के रथ की ध्वजा फिर काटकर गिरा दी. भीष्म ने श्वेत के रथ के घोड़े और सारथी को बाणों से मार गिराया और रथ की ध्वजा काट डाली. तब फिर श्वेत ने अपना शक्ति नामक अस्त्र भीष्म पर चला दिया. भीष्म ने तीर चलाकर उसे बीच ही में रोक दिया.

इस पर श्वेत ने भारी गदा उठाकर जोरों से घुमाई और भीष्म के रथ पर दे मारी. भीष्म को रथ पर से कूदकर अपने प्राण बचाने पड़े. श्वेत की गदा के वार से भीष्म का रथ चूरचूर होकर बिखर गया. भीष्म क्रोध के मारे आपे से बाहर हो गये और एक बाण खींचकर श्वेत पर जोर से दे मारा. बाण के लगते ही विराट-कुमार श्वेत के प्राण-पखेरू उड़ गये. यह देख दु:शासन बाजे बजाता हुआ नाच उठा. इसके बाद भी भीष्म ने पांडवों की सेना में भयंकर प्रलय मचा दी.

पहले दिन की लड़ाई में पांडवों की सेना बहुत ही तंग हुई. धर्मराज युधिष्ठिर के मन में भय छा गया. दुर्योधन आनंद के कारण झूमता हुआ दिखाई दिया. पांडव घबराहट के मारे श्रीकृष्ण के पास गये.

श्रीकृष्ण सबको साहस बंधाते हुए युधिष्ठिर से बोले- "भरत श्रेष्ठ! आप कोई चिंता न करें. आपके चारों भाई विख्यात शूर हैं, तो फिर आप व्यर्थ भय-विह्वल हो रहे हैं. आपका साथ देने के लिये जब विराटराज, पांचालराज, उनके वीर पुत्र धृष्टद्युम्न एवं हम हैं तो फिर घबराने का कारण क्या है? क्या आपको यह भी स्मरण नहीं रहा कि भीष्म को मारना शिखंडी के जीवन का एकमात्र ध्येय है?" इस प्रकार श्रीकृष्ण युधिष्ठिर और पांडव-सेना का धीरज बंधाने लगे.■

डॉ. अनीता कपूर

जन्म : भारत. शिक्षा : एम.ए. (हिंदी एवं इंग्लिश), पी-एच.डी. (इंग्लिश), सितार एवं पत्रकारिता में डिप्लोमा. कवियत्री, लेखिका, पत्रकार (नमस्ते अमेरिका समाचार-पत्र) एवं अनुवादिका. फ्रेमोंट हिन्दू मंदिर और सांस्कृतिक केंद्र में योगदान हेतु अनेकों बार पुरस्कृत, हिंदी के प्रचार-प्रसार के लिए हिंदी पढ़ाना और सम्मेलन करना. हिंदी अकादमी दिल्ली द्वारा आयोजित कवि सम्मेलन में प्रथम पुरुस्कार. प्रकाशन : काव्य संग्रह 'बिखरे मोती', 'कादम्बरी' एवं 'अछूते स्वर' प्रकाशित. भारतीय एवं अमरीका की पत्र-पत्रिकाओं में कहानी, कविता, एवं लेख प्रकाशित.

सम्पर्क : anitakapoor.us@gmail.com

कविता

लंका दहन

१

तुम्हारा दिल नहीं हैं
मेरा घोंसला
क्यों उसमें चिड़ियों की तरह
रहूँ
डर-डर कर
सहूँ
तुम्हारा चील-सा झपटना
और तुम जब चाहो
मेरे सपनों के अंडे
फोड़ दो
रौंद दो
नहीं में चिड़िया नहीं
लहूलुहान होने को
अंदर से भी और बाहर से भी
अगर हर हालत में यही होना है
तो
क्यों न बाहर आऊँ
खुद का घर बनाऊँ
तुम पर शस्त्र कैसे उठाऊँ
मोह का बचन ही त्याग दूँ.

▪

२

मुझे अपनी रुलाई खुद ही रोनी है
अपनी हँसी भी खुद ही हँसनी है
वेदना भी स्वयं ही सहनी है
और जीवन को बचाना भी
तो
तुम्हारी ढाल क्यों?
मैं भी तोड़ सकती हूँ
शिव का धनुष
और बना सकती हूँ
पत्थरों का पुल
लंका दहन भी करूँगी
उन परछाईयों का
जो गलती से शायद
साथ आ जाएँ
तेरे मेरे रिश्तों की
और यादों की.

▪

अनुपमा पाठक
सम्पर्क : anushil623@rediffmail.com

अपनों से मिलना भूल गए!

जीवन चलता ही रहा
बस जीना हम भूल गए!

धुंधली-सी आँखें
कुछ भी देख नहीं पाईं
वीरान अँधेरे में
दीया जलाना हम भूल गए!

ये कैसी दौड़ में
लिप्त है इंसान
जाने कब इंसानियत का
नाम ठिकाना हम भूल गए!

नए-नए कीर्तिमान गढ़
होते रहे आनंदित
और अपनी ही धरती का
साथ निभाना हम भूल गए!

बदले यह मौसम
हो सत्य की प्राण प्रतिष्ठा
ऐसे कैसे हुआ अनर्थ
सरलता के गुण गाना हम भूल गए!

व्यस्तताओं के बीच
अपनों से मिलना भूल गए!
जीवन चलता ही रहा
बस जीना हम भूल गए!

■

मुक्ति का सोपाण!

किरणों सा स्निग्ध
चाँद की
चांदनी सा सौम्य

धरा पर
हुआ अवतरित वह
स्पर्श से परे
जाने उसके कितने तह

फूलों की खुशबू सा
सुवास
प्रकृति के मुख पर
मंद-मंद हास

प्रभु की छवि सा
अभिराम
भक्ति है मुक्ति का
सोपाण!

■

पल्लवी सक्सेना
भोपाल में जन्म. नूतन कॉलेज, भोपाल से बी.ए. एवं अँग्रेज़ी साहित्य में एम.ए. की उपाधि प्राप्त की. विगत ५ वर्षों से लंदन में निवास. हिन्दी ब्लॉग जगत की सक्रिय सदस्य एवं मेरे अनुभव (http://mhare-anubhav.blogspot.com) हिन्दी ब्लॉग लिखती हैं.
सम्पर्क : pallavisaxena80@gmail.com

कविता

क्या हुआ जो

आज हम तुम साथ नहीं हैं
कभी तो साथ थे न हम
आज भी उन्हीं यादों के सहारे
गुजार जाएगी यह ज़िंदगी

न कभी मैं अकेली हो सकती हूँ
तुम्हारे बिना भी
और न तुम ही कभी
तन्हा हो सकते हो मेरे बिना
फिर हम चाहें न चाहें

मैं नहीं कहती की तुम बेवफा हो
और आज तुम जहां हो
उसके जिम्मेदार तो तुम खुद हो
क्योंकि वक्त के हाथों
फर्ज़ का हाथ थामकर तो
मैंने खुद बेफाई की तुमसे

अब जब हम दोनों की
ज़िंदगी की राहें ही
अलग हो चुकी हैं
तो किसी को कोई हक नहीं
एक दूसरे को बेवफा कहने का

माना कि फर्ज़ की राह में
मेरा कुछ फर्ज़ तुम्हारे लिए भी था
मगर शायद वो फर्ज़
उस फर्ज़ से कम ही था
जिसे निभाने के लिए
मैंने छोड़ दिया उसे

जो मुझे दिल से अज़ीज था
जानते हो क्यूँ
क्यूंकि तुम से पहले अधिकार है
मुझ पर उनका जिन्होंने
मुझे दिया मेरा अस्तित्व
तुम्हारी ज़िंदगी में आने के लिए.

▪

मनोज जैन 'मधुर'

२५ दिसम्बर १९७५ को बामौरकला, शिवपुरी मध्यप्रदेश में जन्म. अंग्रेजी साहित्य में स्नातकोत्तर, शिक्षा शास्त्र में डिप्लोमा. विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं, दूरदर्शन एवं आकाशवाणी से प्रसारित. अनेकों संस्थाओं द्वारा सम्मानित. संप्रति : सीगल लेव इंडिया प्राइवेट लिमिटेड के क्षेत्रीय प्रबंधक.

सम्पर्क : सी.एस.-१३, इंदिरा कालोनी बाग उमराव दूल्हा, भोपाल. ईमेल - manojjainmadhur25@gmail.com

भावों का अभिषेक न हो

हम बाँधा करते भावों को
पर शब्द नहीं बँध पाते हैं
मन बोला ऐसा होता है
जब कथनी करनी नेक न हो.

बँधते हैं शब्द समुच्चय में
वाणी से मुखरित होते हैं
शब्दों में ताकत अद्‍भुत है
हर मन का कल्मष धोते हैं.

शब्दों में होती शीतलता
शब्दों में होती है ज्वाला
खिल जाते वेद ऋचाओं में
यदि छू ले पावन मन बाला.

हमने चाहा सूरज लिख दें
पर अँधियारा लिख जाता है
मन बोला ऐसा होता है
जब नीर और छीर विवेक न हो

ढाई आखर को बिन समझे
ढाई आखर हो जाने की
हमने शब्दों से चाह रखी
मन वांछित फल के पाने की.

शब्दों का सच्चा सेवक ही
आराधक है मतवाला है
सच है ये शब्द सनातन हैं
शब्दों का रूप निराला है.

हमने चाहा कुछ अर्थ खुले
विस्तार न मिलता शब्दों को
मन बोला ऐसा होता है
जब मानस वाणी एक न हो.

शब्दों में होता सम्मोहन
शब्दों में होती गहराई
रचता शब्दों का जादूगर
शब्दों से सच्ची कविताई.

शब्दों की पावन गंगा में
जो भी उतरा वह हुआ अमर
शब्दों ने रच दी रामायण
शब्दों ने छेड़ा महासमर.

हमने चाहा कुछ गीत लिखें
पर छंद नहीं सध पाता है
मन बोला ऐसा होता है
जब भावों का, अभिषेक न हो.

■

विजय कुमार
इंजीनियरिंग एवं एमबीए की डिग्रियाँ हासिल कीं. आध्यात्म के अलावा कविता लिखने, पेंटिंग बनाने और फोटोग्राफी में दखल रखते हैं. संगीत में भी रुचि. संप्रति- वरिष्ठ जीएम, मार्केटिंग के तौर पर कार्यरत. हैदराबाद में रहते हैं.
संपर्क : F.N.-402, 5th Floor, Pramila Resi. H.N.36-110/402, Defency Colony, Sainikpuri Post Secunderabad.
Email : vksappatti@gmail.com blog : www.poemsofvijay.blogspot.com

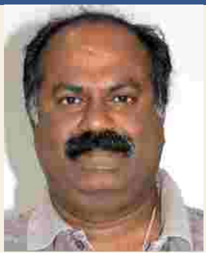

कविता

मर्द और औरत

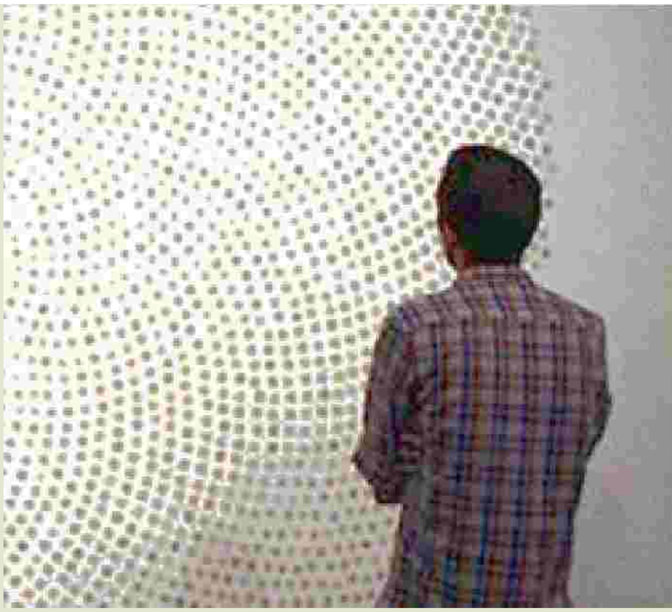

हमने कुछ बनी बनाई रस्मों को निभाया
और सोच लिया कि
अब तुम मेरी औरत हो और मैं तुम्हारा मर्द
लेकिन बीतते हुए समय ने जिंदगी को
सिर्फ टुकड़ा-टुकड़ा किया.

तुमने वक्त को ज़िन्दगी के रूप में देखना चाहा
मैंने तेरी उम्र को एक जिंदगी में बसाना चाहा.

कुछ ऐसी ही सदियों से चली आ रही बातों ने
हमें एक-दूसरे से और दूर किया

प्रेम और अधिपत्य
आज्ञा और अहंकार
संवाद और तर्क-वितर्क
इन सब वजह और बेवजह की बातों में
मैं और तुम सिर्फ
मर्द और औरत ही बनते गये
इंसान भी न बन सके अंत में.

कुछ इसी तरह से ज़िन्दगी के दिन
तन्हाईयो की रातों में ढले
और फिर
तनहा रात उदास दिन बनकर उगे.

फिर उगते हुए सूरज के साथ
चलते हुए चाँद के साथ
और टूटते हुए तारों के साथ
हमारी चाहतें बनी और टूटती गयी
और आज हम अलग हो गये हैं.

बड़ी कोशिश की जानां
मैंने भी और तूने भी
लेकिन
न मैं तेरा पूरा मर्द बन सका
और न तू मेरी पूरी औरत.

खुदा भी कभी-कभी अजीब से
शगल किया करता है
है न जानां.

■

प्रताप नारायण सिंह

तकनीकी स्नातक. साहित्य, संगीत एवं लेखन में रुचि. खण्ड काव्य 'सीता एक नारी' शीघ्र प्रकाश्य. सम्प्रति : डालमिया ग्रुप की कंपनी में महाप्रबंधक.

सम्पर्क : बी-२७३, पॉकेट-२, केन्द्रीय विहार, सेक्टर- ८२, नॉएडा. ईमेल : pratapsingh1971@gmail.com

कौन-सा सच खोजते हो?

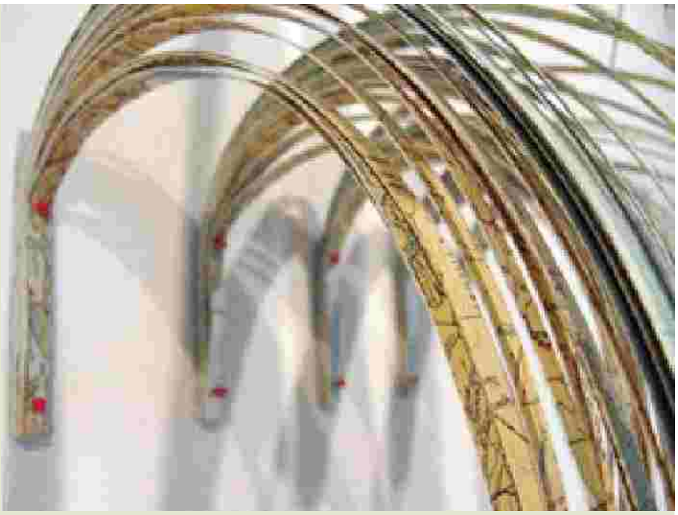

जन्म की पहली किरण से
देह के अवसान तक
खींचता है चल रहा
वह सृष्टि का रथ अनवरत
हर्ष में हो उल्लसित
और वेदना में हो व्यथित
डोर थामे साँस की
चलता मनुज का काफिला
यह सत् नही तो क्या भला?

मोहती मन, प्राण को
शिशु की मधुर किलकारियाँ
राग भरतीं सघन, मन में
प्रिय नयन की बोलियाँ
रागिनी को साँस में भर
हर्ष से उन्मत्त हो
तीर है चंचल सरित के
गीत गाता बाँवरा
यह शिव नही तो क्या भला?

पूर्व नभ में
प्रस्फुटित होती मनोरम अरुणिमा
अमराइओं में
पत्र से छनती मही पर चन्द्रिका
पुष्प, पल्लव, पुष्करिणियां
विविध रंगी बहु लता
मेदिनी के वक्ष पर
यह लहलहाती हरीतिमा
सुन्दर नहीं तो क्या भला?

कौन-सा सत्
कौन-सा शिव
और सुन्दर कौन-सा
खोजते हो
मध्य-वन, गिरि कंदराओं, गढ़ शिला
क्यों अधिक निष्ठा तुम्हारी
मृत्यु में, निर्वाण में
हो नहीं जीवन जगत में और माया
तो कहो
अस्तित्व उनका क्या भला?

जनमता, मरता रहा है
जीव सदियों से यहाँ
किंतु शाश्वत सत्य-सा
जीवन सतत चलता रहा
अवतरित होते रहे हैं
देव जीवन के लिए
कोई सिखलाती नहीं गीता
पलायन, विमुखता
बस कर्म ही सबसे बड़ा.

■

डॉ. रचना शर्मा

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से संस्कृत साहित्य में एम.ए., देश-विदेश के अनेक पत्र एवं पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित. 'काशी खंड और काशी' पुस्तक प्रकाशित. संप्रति- राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय चुनार, मिर्जापुर में एसोसिएट प्रोफेसर.

सम्पर्क : rachanasrachana@gmail.com

कविता

याद रहे

तुम्हारे साथ
कोई हादसा हो जाये
तो खामोश रहना
कुछ खो जाये
लुट जाये
तो खामोश रहना

हक और हिस्से की बात
तुम्हें शोभा नहीं देती
तुम्हारी तमन्नाएँ, तुम्हारे सपने
पूरे किये जाएँ
ये ज़रूरी नहीं
भले ही
घुट जाये दम
तुम्हें निभाने होंगे - रिश्ते

ध्यान रहे
तुम्हारी ज़िंदगी में गलतियाँ
सिर्फ तुम्ही से होंगी
तुम्हें हर समय
याद रखना होगा
कि तुम स्त्री हो.

■

विस्तार

बार-बार
सहता अपमान
टुकड़े-टुकड़े टूटते आसमान
डर लगता है
कहीं गिर ना जाये
जब भी देखती हूँ
क्षितिज के उस पार छाया सन्नाटा
तो सोचती हूँ
क्या होगा ?
यदि विदीर्ण हो जाये आसमां
और टूट जाये
क्षिजित पर फैला सन्नाटा
आसमां टूटता है
धारा समाहित कर लेती है
उसे अपने अंक में
और विस्तृत कर लेती है
पाताल को
ताकि, उसमे रक्षित हो पायें
समाज से संतप्त
अनेक सीताएं.

■

अरविन्द कुमार पाठक

अन्धारी, भाया खुटहा, जिला भोजपुर, बिहार में जन्म. संस्कृत में मध्यमा के अलावा मगध विवि से भौतिकी ऑनर्स में स्नातक एवं लोक प्रशासन में स्नातकोत्तर की डिग्रियाँ हासिल कीं. नामी पत्रिकाओं में आलेखों के प्रकाशन के अलावा कादम्बिनी के मतांतर स्तम्भ के लिए नियमित लेखन. लेखकों से पत्र-मित्रता में अभिरुचि. सम्प्रति : ग्रेसिम इंडस्ट्रीज लिमिटेड में वरिष्ठ केमिस्ट.

सम्पर्क : ए-१०, एबीसी लाइन, बिरलाग्राम, नागदा, उज्जैन, म.प्र. ईमेल- arvindpathak07@yahoo.com

ईश्वर तुम छुप नही पाओगे

रात के घने अंधकार
दिन की चिलचिलती धूप
सूरज का पहरा
चाँद की आँख मिचौली
तारों के मध्य कहाँ तक छिपोगे
सूरज के संग उगते
संध्या की गोद में खेलते
तेज धूप, वर्षा, ठिठुराती ठंड
कहाँ, कहाँ छिपोगे
खिलते फूलों में, पतझड़ में
सूखी नदी के क्रन्दन में
उफनती नदी के उल्लास में
कब तक छुपोगे और कहाँ तक
जन्म से मरण
प्रकृति के छद्म आवरण
भावनाओं में बहकाकर
क्रूरता को कराते हो
तो कभी प्रेम की धार बहाते हो
मैं तुम्हें खोज ही लेता हूँ
जब तक श्रद्धा विश्वास पर आरूढ़ है
तुम चाहकर भी नही छुप पाओगे
न मैं छुपकर रहने दूँगा तुम्हें.

■

मेरे आँगन की नदी

न बरसात में उफनती है
न गर्मी में सूखती है
वह प्रतीक्षा भी नहीं करती
हिमखण्डों के विगलित होने की
न करती कभी याचना
मदमस्त बादलों से बरसने की
उसे प्रकृति के बदलते तेवर से
तनिक भी डर नही लगता
न मोह है उसे पूजे जाने का
कभी आस्था और परम्परा के नाम पर
इस नदी का स्रोत आँगन में
अजस्र प्रवाहमान रहता है
सम्बन्धों की असंख्य एवं अनवरत श्रृंखलाओं से
वह उन्हीं की भावनाओं के प्रवाह में
बहती, सूखती, उफनती है
हिमखण्डों से कहीं कठोर एवं द्रवित होने के
कई साधन हैं उसके पास
स्नेह, ममत्व एवं अत्मीयता के रूप में
वह कभी नही चाहती होना समुद्रोन्मुख
क्योंकि उसे पता है गंन्तव्य
उसका प्रवाह स्वयं में
विलीन होना जानता है
इच्छा और अनिच्छा में
तभी तो वह शांत तो कभी उफन लेती है
वह नदी मेरी मां है
मेरी मां
कोई और नहीं.

■

कुमार अनिल

१३ जून १९५६ को मेरठ में जन्म. शिक्षा- बी.एस.सी., एम.ए. (अर्थशास्त्र). राष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित. कब तक चुप रहें (ग़ज़ल-संग्रह) एवं उदीषा (कविता-संग्रह) प्रकाशित. दुष्यंत स्मृति पुरस्कार से सम्मानित. संप्रतिः स्टेट बैंक आफ इंडिया में सेवारत.

सम्पर्क : kumaranilgupta123@gmail.com

ग़ज़ल

एक

सुरमई शाम का मंज़र होते, तो अच्छा होता
आप दिल के भी समंदर होते, तो अच्छा होता

बिन मिले तुमसे मैं लौट आया, कोई बात नहीं
फिर भी कल शाम को तुम घर होते, तो अच्छा होता

माना फनकार बहुत अच्छे हो तुम दोस्त मगर
काश इन्सान भी बेहतर होते, तो अच्छा होता

हम से बदहालों, नकाराओं, बेघरों के लिए
काश फुटपाथ ये बिस्तर होते, तो अच्छा होता

मैं जिसमें रहता भरा ठन्डे पानियों की तरह
आप माटी की वो गागर होते, तो अच्छा होता

यूं तो जीवन में कमी कोई नहीं है, फिर भी
माँ के दो हाथ जो सर पर होते, तो अच्छा होता

तवील रास्ते ये कुछ तो सफ़र के कट जाते
तुम अगर मील का पत्थर होते, तो अच्छा होता

तेरी दुनिया में हैं क्यूं अच्छे-बुरे, छोटे-बड़े
सारे इन्सान बराबर होते तो, अच्छा होता

इनमें विषफल ही अगर उगने थे हर सिम्त 'अनिल'
इससे तो खेत ये बंजर होते, तो अच्छा होता.

▪

दो

हर शख्श है लुटा-लुटा हर शय तबाह है
ये शह्र कोई शह्र है या क़त्ल-गाह है

जिसने हमारे खून से खेली हैं होलियाँ
हाकिम का फैसला है कि वो बेगुनाह है

ये हो रहा है आज जो मजहब के नाम पर
मजहब अगर यही है तो मजहब गुनाह है

हम आ गए कहाँ कि यहाँ पर तो दोस्तों
रोशन-जहन है कोई, न रोशन निगाह है

दहशतजदा परिंदा जो बैठा है डाल पर
यह सारे हादसों का अकेला गवाह है

मेरी ग़ज़ल ने जो भी कहा, सब वो सच कहा
ये बात दूसरी है कि सच ये सियाह है

ये शहरे सियासत है यहाँ आजकल 'अनिल'
इंसानियत की बात भी करना गुनाह है.

▪

पवन कुमार
विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में ग़ज़लें प्रकाशित. सम्प्रति - भारतीय प्रशासनिक सेवा में हैं तथा नॉएडा में कार्यरत.
सम्पर्क : singhsdm@gmail.com

एक

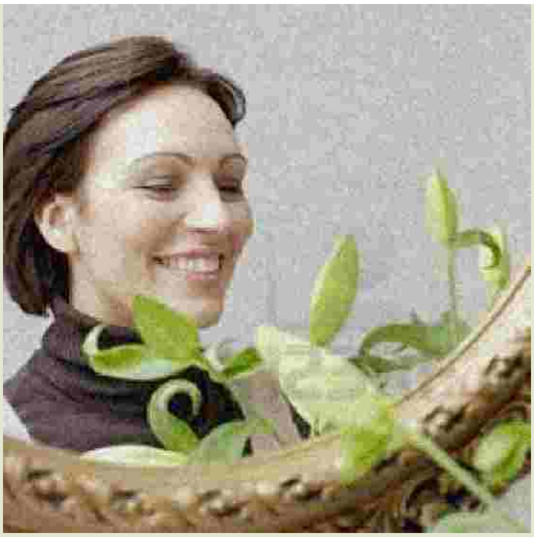

जरा-सी चोट को महसूस करके टूट जाते हैं
सलामत आईने रहते हैं चेहरे टूट जाते हैं

पनपते हैं यहाँ रिश्ते हिजाबो एहतियातों ने
बहुत बेबाक होते हैं वो रिश्ते टूट जाते हैं

नसीहत अब बुजुर्गों को यही देना मुनासिब है
ज़ियादा हों जो उम्मीदें तो बच्चे टूट जाते हैं

दिखाते ही नहीं जो मुद्दतों तिश्नालबी
सुबू के सामने आके वो प्यासे टूट जाते हैं

समन्दर से मोहब्बत का यही एहसास सीखा है
लहर आवाज़ देती है किनारे टूट जाते हैं

यही इक आखरी सच है जो हर रिश्ते पे चस्पां है
ज़रूरत के समय अक्सर भरोसे टूट जाते हैं.

■

दो

दिल में कोई खलिश छुपाये हैं
यार आईना ले के आये हैं

अब तो पत्थर ही उनकी किस्मत है
जिन दरख़्तों ने फल उगाये हैं

दर्द रिसते थे सारे लफ़्ज़ों से
ऐसे नग़्मे भी गुनगुनाये हैं

अम्न वालों की इस क़वायद पर
सुनते हैं 'बुद्ध मुस्कुराये हैं'

यह भी आवारगी का आलम है
पाँव अपने, सफ़र पराये हैं

जब कि आँखें ही तर्जुमां ठहरीं
लफ्ज़ होठों पे क्यों सजाये हैं

कच्ची दीवार मैं हूँ बारिश वो
हौसले ख़ूब आजमाये हैं

देर तक इस गुमाँ में सोते रहे
दूर तक ख़ुशगवार साये हैं

जिस्म के ज़ख़्म हों तो दिख जायें
रूह पर हमने ज़ख्म खाये हैं.

■

वीनस केशरी

१ मार्च १९८५ को जन्म. शिक्षा - बी. ए., अनेक पत्र-पत्रिकाओं तथा अंतर्जाल की अनेक कार्यशालाओं में ग़ज़ल, गीत व दोहे प्रकाशित. संप्रति- पुस्तक व्यवसाय.

सम्पर्क : 'जनता पुस्तक भण्डार', ९४२, मुट्ठीगंज, इलाहाबाद (उ.प्र.) ईमेल - venuskesari@gmail.com

ग़ज़ल

एक

थप्पड़, चीखें, चीत्कारें फिर सन्नाटा
पल भर कुछ कहती आँखें फिर सन्नाटा

मेला ठेला, भोपूं बाजा और झांकी
खत्म हुई सारी चीजें फिर सन्नाटा

ढेर दवाएं, लाख दुवाएं, बेचैनी
जब पूरी होती साँसें फिर सन्नाटा

तेरी यादें जैसे रेल कोई गुज़रे
धड़ धड़ धड़ डिब्बे गुजरें फिर सन्नाटा

किसको अपना समझूं किससे दूर रहूँ
पहले पुकारें आवाजें फिर सन्नाटा

सन्नाटे से डर कर 'वीनस' की मैंने
दर्पण से कितनी बातें, फिर सन्नाटा.

■

दो

अच्छे लोगों से ही मिलने का जतन रखना
खार कैसे छोड़ दे खुद में चुभन रखना

याद आता है तुम्हारा मखमली लहजा
और बातों को घुमा कर आदतन रखना

अनकही बातें तुम्हारी याद हैं मुझको
रख सको तो याद तुम पहली छुअन रखना

जिस्म चन्दन, रूह निर्मल, मन कमल होंगे
छोड़ दें जब ये सभी, खुद में तपन रखना

याद है मुझको अभी तक चौंकना तेरा
अपनी आँखों में वही डरते हिरन रखना

मैं कहाँ ले जाऊं अपनी शायरी का फन
तुम ही अपने दर पे इक शामे-सुखन रखना.

■

मयंक अवस्थी
२५ जून १९६४ को हरदोई, उत्तरप्रदेश में जन्म. ग़ज़ल तथा गीत एवं रचनायें तथा समीक्षायें विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित. सम्प्रति - भारतीय रिज़र्व बैंक नागपुर में कार्यरत.
सम्पर्क : ई-३८ रिज़र्व बैंक अधिकारी आवास, बैरामजी टाउन, नागपुर. ईमेल - awasthimka@gmail.com

एक

वही अज़ाब वही आसरा भी जीने का
वो मेरा दिल ही नहीं ज़ख्म भी है सीने का

मैं बेलिबास ही शीशे के घर में रहता हूँ
मुझे भी शौक है अपनी तरह से जीने का

वो देख चाँद की पुरनूर कहकशाओं में
तमाम रंग है खुर्शीद के पसीने का

मैं पुरखुलूस हूँ फागुन की दोपहर की तरह
तेरा मिजाज़ लगे पूस के महीने का

समंदरों के सफ़र में सम्हाल कर रखना
किसी कुयें से जो पानी मिला है पीने का

'मयंक' आँख में सैलाब उठ न पाये कभी
कि एक अश्क मुसाफिर है इस सफीने का.

■

अज़ाब/पीड़ा, पुरनूर कहकशाओं/ज्योतिर्मय व्योम गंगाओं
खुर्शीद/सूर्य, पुरखुलूस/अत्मीयता से भरा हुआ

दो

खुशफहमियों में चूर, अदाओं के साथ-साथ
भुनगे भी उड़ रहे हैं हवाओं के साथ-साथ

पंडित के पास वेद लिये मौलवी क़ुरान
बीमारियाँ लगी हैं दवाओं के साथ-साथ

वो ज़िन्दगी थी इसलिये हमने निभा दिया
उस बेवफा का संग वफ़ाओं के साथ-साथ

इस हादसों के शहर में सबकी निगाह में
खामोशियाँ बसी हैं सदाओं के साथ-साथ

उड़ती है आज सर पे वही रास्ते की धूल
जो कल थी रहग़ुज़ार में पाँओं के साथ-साथ

जज़बात खो गये मेरे आँसू भी सो गये
बच्चों को नींद आ गयी माँओं के साथ-साथ.

■

डॉ. भावना कुँअर

हिन्दी व संस्कृत में स्नातकोत्तर उपाधि, बी.एड., पी-एच.डी. (हिन्दी). टेक्सटाइल डिजाइनिंग, फैशन डिजाइनिंग में डिप्लोमा. तारों की चूनर (हाइकु संग्रह) एवं साठोत्तरी हिन्दी गज़ल में विद्रोह के स्वर पुस्तकें प्रकाशित. विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में कविता, कहानी, गीत, हाइकु, बालगीत, लेख, पुस्तक-समीक्षायें प्रकाशित. सम्मान : 'हाइकु रत्न सम्मान' महेन्द्रू पटना से सम्मानित. संप्रति : सिडनी यूनिवर्सिटी में अध्यापन.

संपर्क : ईमेल - bhawnak2002@gmail.com ब्लॉग - dilkedarmiyan.blogspot.com

ताँका

सालता रहा
सदियों तक दुःख
परछाई-सा
होकर फिर दूर
भागता रहा सुख।

भरे कुलांचे
निरर्थक प्रयास
बड़ा उदास
बहुत ही सलौना
मासूम मृगछौना।

हो गई भोर
गुनगुनाते पंछी
चारों ही ओर
छिपकर बैठा है
मेरे मन का मोर।

सह न पाया
ये कोमल शरीर
लू के थपेड़े
लगते तन पे ज्यूँ
आग लिपटे कोड़े।

मुश्किल बड़ा
जीवन का सफ़र
मिलता नहीं
जो निभाए साथ ये
काँटों भरी डगर।

हमेशा दिया
अपनों ने ही धोखा
मैं भी जी गई
उफ़ बिना किए ही
ये जीवन अनोखा।

अभागा मन
है सहारा तलाशे
कितनी दूर
इस जहाँ से भागे
टूटे, नेह के धागे।

अलसाया-सा
मलता था सूरज
उनींदी आँखें
खोल न पाए पंछी
फिर अपनी पाँखें।

छनती रही
रात भर चाँदनी
झूम-झूम के
चाँद और तारे भी
गाते दिखे रागिनी।

पीर की गली
मिला, ओर न छोर
कहाँ मैं जाऊँ
रिसता मन लिये
क्या होगी कभी भोर!

▪

नीरज गोस्वामी

अगस्त १९५० को जम्मू में जन्म. अंतरजाल की लगभग सभी प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में ग़ज़लें प्रकाशित. पेशे से इंजीनियर. अनेक विदेश यात्राएं कर चुके हैं. सम्प्रति - भूषण स्टील मुंबई में वाइस प्रेसिडेंट के पद पर कार्यरत.

सम्पर्क : neeraj1950@gmail.com

दिल में उतरने के रास्ते

खोला करो आँखों के दरीचों को संभल कर
इनसे भी कभी लोग उतर जाते हैं दिल में

जब भी आप किसी प्रतिष्ठित लेखक या शायर की किताब खरीदते हैं तो उसमें प्रस्तुत सामग्री की गुणवत्ता से आपकी अपेक्षाएं शत-प्रतिशत होती हैं, चलिए शत प्रतिशत ना भी सही अस्सी प्रतिशत तो होती ही हैं, ये बात किसी ऐसे लेखक या शायर पर लागू नहीं होती जो अधिक प्रसिद्ध न हो या आपने जिसे कभी न पढ़ा हो. इसके फायदे और नुकसान दोनों ही होते हैं. मेरे ख्याल से फायदे अधिक होते हैं और नुकसान कम, क्योंकि प्रसिद्ध लेखक की पुस्तक अगर गुणवत्ता पर खरी न उतरे तो आपको निराशा होती है, पर अनजान लेखक की किताब ख़राब गुणवत्ता वाली भी हो तो आप अधिक परेशान नहीं होते और अगर वो किताब आपकी अपेक्षाओं से भी अधिक गुणवत्ता की हो तो जो ख़ुशी मिलती है उसे वो ही समझ सकता है जिसने ये अनुभव किया हो.

मुझे जनाब 'सादिक' साहेब की किताब 'सिर पर खड़ा शनि है' पढ़ कर जो ख़ुशी हुई उसे ही मैं आपके साथ आज बांटना चाहता हूँ. उज्जैन मध्य प्रदेश में जन्में 'सादिक' साहेब दिल्ली विश्व विद्यालय के उर्दू विभाग में प्रोफ़ेसर हैं. आपकी शायरी की बहुत-सी किताबें हिंदी और उर्दू में छप चुकी हैं.

'सादिक' साहेब की शायरी आम इंसान के समझ में आने वाली है. निहायत सादा जबान में वो कमाल के शेर कह देते हैं. जैसे-जैसे आप इस किताब के वर्क पलटते हैं वैसे-वैसे आपको उनकी शायरी के अलग-अलग रंग दिखाई देने लगते हैं. जैसे :

मेरे वजूद के कोई मानी नहीं रहे
पैना-सा एक तीर हूँ टूटी कमान का
आकाश कोसने से कोई फायदा नहीं
बेहतर है नुक्स देख लूं अपनी उड़ान का
जब से हुआ है राज पिशाचों का शहर पे
जंगल में हमको खौफ़ नहीं अपनी जान का

एक और खूबी जो मुझे नज़र आयी 'सादिक' साहेब की शायरी में वो हिंदी के शब्दों का बड़ी खूबसूरती से अपने शेरों में इस्तेमाल करते हैं, मजे की बात ये है कि हिंदी के ये शब्द कभी भी, कहीं भी भरती के नहीं लगते बल्कि बड़े सहज ढंग से आते हैं :

उसके तकिये पर कढ़ा सुन्दर सुमन
आंसुओं से हो गया गीला, तो फिर
हम तो सच-सच मुंह पे कह देंगे मगर
रंग उसका पड़ गया पीला, तो फिर
देख सुन्दरता अभी तो मुग्ध हो
सांप वो निकला जो ज़हरीला, तो फिर
हम तो अपने पर रखें संयम मगर
आके दिखलाये मदन लीला, तो फिर

ग़ज़लों में नए प्रयोग आज कल सभी करने लगे हैं, रिवायती ग़ज़लें अब कल की बातें हो गयीं हैं. ज़िन्दगी को बारीकी से देखने का हुनर ग़ज़लों में आ गया है. 'सादिक' साहेब की एक ग़ज़ल के ज़रा ये शेर पढ़ें :

> "प्रसिद्ध लेखक की पुस्तक अगर गुणवत्ता पर खरी न उतरे तो आपको निराशा होती है, लेकिन अनजान लेखक की किताब अपेक्षाओं से अधिक गुणवत्ता की हो तो पढ़ने में ख़जाना मिलने जैसी ख़ुशी महसूस होती है."

तेरा वजूद तो निर्भर हवा पे है नादाँ
जो फूला फिरता है इक बार फट के देख ज़रा
यूँ बैठे-बैठे तो खुलते नहीं किसी के गुण
ये तेग खींच के, मैदां में डट के देख ज़रा
लगाना चाहे जो अंदाजा अपनी कीमत का
तो अपने पद से तू इक बार हट के देख ज़रा

'डालफिन बुक्स', ४८५५-५६/२४, हरबंस स्ट्रीट, अंसारी रोड, दरिया गंज, दिल्ली से प्रकाशित एक सौ बारह पृष्ठ की ये किताब चार भागों में विभक्त है : १. मेरे हाथ में कलम था, २. डूबते ज़जीरों में, ३. सच्चाईयों के कहर में, और ४. शिकस्त मुझको गवारा नहीं. ■

चांद शुक्ला हदियाबादी
Director, Radio Sabrang, Denmark, President: Global Community Radio Broadcasters, Poet Broadcaster And Media Activist.
Voelundsgade 11, 1 tv. 2200 Copenhagen N, Denmark
Email : chaandshukla@gmail.com

कहानी

परायी प्यास का सफर

जब डेनमार्क के इस सीमावर्ती शहर के लिए प्रवीण बावला पहुँचे तो शाम जवान थी. मौसम भी बेहद दिलकश था. बसंत ऋतु की खुनकी हवा में घुलकर वातावरण को मस्त किये दे रही थी. शहर तो छोटा-सा ही था, लेकिन कार्निवाल के कारण खासी भीड़ थी. अलग-अलग शहरों और कस्बों से आये नृत्य समूह अपनी तैयारियों के अन्तिम चरण में थे. सारी गहमागहमी के बावजूद प्रवीण बावला उदास थे. चारों तरफ की भीड़ और उत्साह के बावजूद उन्हें सब कुछ बेरस लग रहा था. दरअसल पिछले तीन दिनों से वे जिस मानसिक उद्वेलन की स्थिति से गुज़र रहे थे उसका कारण वे स्वयं भी समझ नहीं पा रहे थे.

ऐ यंग मैन! गहमा-गहमी के बीच चर्च के पास एक रेलिंग के सहारे टिके खोये से प्रवीण बावला की तंद्रा को उनके सहायक जैनसन ने भंग किया - बस अब कार्निवाल के चीफ गेस्ट आने ही वाले हैं. और एक खुशखबरी है - जैनसन चहका - दरअसल मैं इसी बीच यहीं के एक ग्रुप सालसा की टीना से पूरे बीस मिनट रेडियो के लिए बात करने का समय लेकर आया हूँ. मेरी आंटी ने ही किसी ज़माने में इस समूह का गठन किया था.

> *माँ बाप का दिल रखने के लिए उन्होंने यह कभी नहीं बताया कि उनकी ज़िन्दगी में सामन्था आ गयी है! माँ बाप अब आयु के उस दौर में पहुँच गये थे कि कब जीवन की डोर हाथों से निकल जाय कोई भरोसा नहीं था!*

जब वह दोनों लोग वहाँ पहुंचे तो सब कुछ सामान्य ही था. तमाम नृत्यांगनायें अपनी साज सज्जा को अन्तिम निखार देने में व्यस्त थीं. साज सज्जा के नाम पर तो बस मेकअप ही देखना था, क्योंकि कपड़ों के नाम पर तो लगभग सभी के शरीर पर इतने ही वस्त्र थे कि उन्हें ध्यान से देखने पर ही उनकी उपस्थिति को महसूस किया जा सकता था. लेकिन प्रवीण बावला अब इस तरह के दृश्यों के अभ्यस्त हो गये थे कि अमूमन उनका ध्यान ही इस तरफ नहीं जाता था. वे सामने एक नृत्यांगना के काले बालों को देख कर पुरानी याद में खो जाते हैं कि उन्होंने सामन्था से केवल इसलिए लौ लगाई थी कि उसके बाल काली कोयल के रंग से भी काले थे.

जैसे ही सामन्था का ध्यान आया, उनके मन में अजीब तरह का हौल सा उठा. जब भी वे उसे याद करते हैं तो

बरबस उन्हें अपनी मंगेतर याद आ जाती है. उसके बाल गज़ब के लम्बे और काले थे. बिल्कुल सामन्था जैसे या सामन्था के उसके जैसे! इस सवाल से वे हमेशा बचते रहे. जब तक माँ और पिता जी जीवित रहे तब तक यह ज़रूर लिखते कि विम्मो अभी भी तुम्हारी प्रतीक्षा में बैठी है, इसका मतलब था कि अभी भी कुआँरी है! तुम्हारी राह देख रही है, तब उन्हें हँसी आती, लेकिन माँ बाप का दिल रखने के लिए उन्होंने यह कभी नहीं बताया कि उनकी ज़िन्दगी में सामन्था आ गयी है! माँ बाप अब आयु के उस दौर में पहुँच गये थे कि कब जीवन की डोर हाथों से निकल जाय कोई भरोसा नहीं था! उन्हें कोई भी सदमा नहीं दिया जा सकता था.

उसके बाल बेहद घने और काले थे. आखें नीली, लेकिन उसका चेहरा हूबहू हिन्दुस्तानी था और उसने इस माहौल में भी बिल्कुल ही अलग तरह की पोशाक पहन रक्खी थी. इनसे मिलिए यह टीना हैनसन हैं सालसा समूह की अगुवा.

और सदमा भी तो अकेला नहीं था. जब तक वे खुद को तैयार करते कि उन तक ये खबर पहुंचाते, कार्निवाल की तरह वह उनके जीवन में जिस धूम धड़ाके के साथ आयी थी, तीन साल भी ठीक से साथ नहीं रही और बेटी का प्रसाद दे कर चली भी गयी थी.

अचानक उनकी निगाह के एकदम सामने एक भद्र महिला के साथ एक अत्यन्त सुन्दर युवती आ गयी. निगाह ठहरी रह गयी. उसके बाल बेहद घने और काले थे. आखें नीली, लेकिन उसका चेहरा हूबहू हिन्दुस्तानी था और उसने इस माहौल में भी बिल्कुल ही अलग तरह की पोशाक पहन रक्खी थी. इनसे मिलिए यह टीना हैनसन हैं सालसा समूह की अगुवा. जैनसन ने बताया.

प्रवीण बावला ने सिर्फ औपचारिक रूप से उसे हाय कह के उससे हिन्दी में कहा, आप हिन्दुस्तानी हैं.

वह जवाब में मुस्कुरा भर दी.

उसने फिर सवाल किया, आप के माता पिता कहाँ से हैं?

यह हिन्दुस्तानी नहीं है. जैनसन ने डेनिश में जवाब दिया.

वह युवती मुस्कुराये ही जा रही थी. हालाँकि उन्हें औपचारिकतावश उससे माफी माँगनी चाहिए थी, लेकिन उन्हें अभी भी यकीन नहीं हो रहा था कि यह हिन्दुस्तानी नहीं. पलकें तो उतनी ही खुली थीं मुस्कुराते समय, जितनी आम तौर पर हिन्दुस्तानी लड़कियों की खुलती हैं. वही हया की लाली और वैसे ही नीची निगाह.

प्रवीण बावला, बस अब चीफ गेस्ट आने ही वाले हैं. इस बीच जैनसन अपनी रिकार्डिंग किट खोलकर तैयार हो गया था. करें शुरू.

उन्होंने किसी तरह रिकार्डिंग पूरी की. हालांकि वे इधर कई एक बरसों से इस कार्निवाल में आ रहे थे और कार्यक्रम तैयार करने की रूपरेखा उसके पास तैयार रहती थी, लेकिन वे मन पसंद कार्यक्रम तैयार नहीं कर पाये, ये वे महसूस कर रहे थे. वे दोबारा मिलने की बात कह के अपने होटल लौट आये.

सारा हुजूम कार्निवाल में व्यस्त था, इसलिए यहाँ शांति थी, फिर भी उनके अन्दर एक अजीब सी हलचल मची हुई थी. बार-बार आँखों के सामने उसी युवती का चेहरा आ रहा था. उन्हें यकीन ही नहीं हो रहा था कि वह भारतीय नहीं. एकाएक प्रवीण बावला का ध्यान अपनी बेटी की तरफ चला गया. बेटी के जन्म के पहले ही सामन्था ने साथ छोड़ दिया. पिछले अठारह बरस से वे हर बरस एकाध बार उससे ज़रूर मिलते. बिल्कुल इसी की तरह वह भी है! बस अन्तर आँखों में है. उसकी आँखें भी आम हिन्दुस्तानियों जैसी हैं. वह यह जानती भी है कि उसका पिता हिन्दुस्तानी है. शायद इस युवती का पिता भी हिन्दुस्तानी हो? वह जानती न हो!

इन सवालों में वे बुरी तरह से उलझ गये कि घबराहट होने लगी. वे काफी देर तक ऊब चूभ होते रहे. जब रहा न गया तो होटल से निकल पड़े. बाहर वही मस्ती का आलम था. कार्यक्रम औपचारिक रूप से शुरू हो चुका था. ऐसा लग रहा था कि केवल आदमी ही नहीं पूरी कायनात, हवाएं, धरती रौशनी सब कार्निवाल की मस्ती में घुलमिल गये हैं. सिर्फ वही अकेले बचे हैं. वे बेमकसद ही भीड़ के पीछे जहाँ सन्नाटा था, वहाँ आकर इधर-उधर घूमने लगे, तभी अचानक उन्हें वही युवती अपनी ही तरह लक्ष्यविहीन घूमती मिल गयी. उसे देखते ही प्रवीण बावला के चेहरे का रंग बदला.

ऐ खूबसूरत लड़की मुझे पहचाना? उन्होंने लगभग दौड़कर उसके पास पहुँचते हुए कहा - माहौल की मस्ती को छोड़कर अकेले?

जवाब में वह इस तरह मुस्कुराई कि प्रवीण बावला को अनुमान लगाने में तनिक भी कठिनाई नहीं हुई कि वह

टीना अपनी सीनियर की अन्तिम परीक्षा देने वाली है. इसके बाद अब वह कॉलेज की पढ़ाई के लिए माँ के शहर में चली जायेगी. अब वह अट्ठारह साल की बस होने ही वाली है इसलिए मॉम के साथ रहने का इरादा नहीं है.

पहचान रही है. दोनों के ही कदम बाज़ार की तरफ मुड़ गये. रोशनी भरपूर थी लेकिन इक्का-दुक्का दुकानों को छोड़कर सभी दुकानें बन्द थीं. चहलकदमी करते हुए ही लड़की ने बात शुरू की - मैं तो भारतीय नहीं, लेकिन मेरे पिता ज़रूर भारतीय थे.

उन्हें मन ही मन प्रसन्नता हुई. उन्होंने इस तरह से उसे देखा कि मानों वह सब कुछ उससे जान लेना चाहते हों. वह उनके मन्तव्य को शायद समझ भी गयी और बोली - बस मुझे इतना ही पता है. इससे अधिक मॉम ने न कुछ बताया और न ही मैंने जानने की ज़रूरत समझी.

मॉम ?

टीना हैनसन मेरी मॉम हैं.

ओह! बहुत अच्छा! कहाँ से ?

मेरी नानी का घर तो कस्बे में था, लेकिन अब हम इसी शहर में रहते हैं.

यह तो बहुत अच्छा है. मैं भी वहीं रहता हूँ. प्रवीण बावला ने लगभग उत्तेजित होते हुए कहा.

क्या अपने पिता के बारे में जानने की इच्छा होती है ?

नहीं! कभी इस बारे में सोचा भी नहीं. जब मॉम को ही ज़रूरत नहीं तो भला मुझे क्यों होने लगी? जवाब उसने बिल्कुल ही औपचारिक लहजे में दिया.

प्रवीण बावला उसकी भावनाओं को समझ पाये या नहीं, लेकिन अपनी सीमाओं को समझ गये फिर उससे रस्मी बातें करने लगे. बातों-बातों ही में पता चला कि उसका नाम क्रिस्टी है. माँ एक बीमा कम्पनी में एजेन्ट है. पहले इसी कस्बे की इन्चार्ज थी, लेकिन जब से उसका काम बढ़ा तो कम्पनी ने उसी शहर में उसे बुला लिया जहाँ वह है. टीना अपनी सीनियर की अन्तिम परीक्षा देने वाली है. इसके बाद अब वह कॉलेज की पढ़ाई के लिए माँ के शहर में चली जायेगी. अब वह अट्ठारह साल की बस होने ही वाली है इस लिए मॉम के साथ रहने का इरादा नहीं है.

प्रवीण बावला को कार्निवाल से लौटे हुए लगभग तीन हफ्ते हो गये. वापिस आने से पहले वे टीना से दोबारा मिले थे, उन्हें रिकार्डिंग की ब्राडकास्ट की तारीख बतायी थी और आपना कार्ड थमा दिया था. उन्हें यकीन था कि टीना ज़रूर आयेगी. दरअसल आते समय उन्होंने उससे वादा किया था कि वह बहुत सारे भारतीयों की पॉलिसी उसे दिलवा देंगे. साथ ही क्रिस्टी को अपने रेडियो नेटवर्क में कोई पार्ट टाइम जॉब दिलाने में मदद करेंगे. बिल्कुल आसान काम होगा और जिससे क्रिस्टी की पढ़ाई में कोई बाधा न हो. वे जब सारे वादे कर रहे थे तो उनके जेहन में टीना या क्रिस्टी नहीं थीं बल्कि सामंथा और अपनी खुद की बेटी थी. वे चाहने लगे थे कि अगर अपनी बेटी को प्यार नहीं दे पाये तो कम से कम इस अभागी बिन बाप की बेटी के सिर पर हाथ फेर कर ही तसल्ली कर लेंगे. उनकी अपनी बेटी भी तो अब अट्ठारह साल की हो गयी है, लेकिन वह तो कब से अपनी माँ के साथ नहीं रहती. रहे भी कैसे? समान्था के रहने का अगर एक ठिकाना हो तब न! पिछले उन्नीस सालों में उसने कम से कम चार तो आदमी बदल ही डाले, जिनके बारे में प्रवीण बावला को पता है. उन्हें अपनी बेटी से बरस में सिर्फ एक बार मिलने की इजाज़त थी बस घंटे आध घंटे के लिए, इन सारे बरसों में वह इतने पिताओं के सानिध्य में आ चुकी थी कि अपने वास्तविक पिता को भी उन्हीं की श्रेणी में रखती. बस तोहफों को बेमन से लेकर अजीब सा ठंडेपन वाला औपचारिक संबंध दर्शाती. वह जैसे-जैसे बड़ी हो रही थी उसके इस तरह के व्यवहार का ठंडापन बढ़ता जा रहा था. इस बार जब वे उससे मिलने गये तो उसने बड़ी तल्खी से कह दिया कि मैं अब अट्ठारह की होने वाली हूँ यानी की आज़ाद हूँ. और आज़ादी का पहला उपभोग इस घोषणा के साथ किया कि अब मैं आप से मिलना ही नहीं चाहती. तभी से प्रवीण बावला का मन उचटा हुआ है. कभी-कभी तो मन में यह भी आता कि लौट जायें अपने देश, लेकिन कहाँ लौटें? हालांकि अभी भी वहाँ उनके कई रिश्तेदार और पुराने परिचित थे, लेकिन माता पिता के मरने के बाद उन्होंने जाकर अपने कस्बे की ज़मीन को बेच दिया था. ऐसे अवसरों पर उन्हें अपनी मंगेतर की भी याद आती. जब वह ज़मीन बेचने गये तो पता चला था कि उसकी अभी भी शादी नहीं हुई है. तब पछतावा भी हुआ था, लेकिन वह क्षणिक ही था क्योंकि समान्था उसी समय उनके जीवन में आयी थी और सब कुछ सातवें आसमान पर था. उसका साथ पाकर वे सबको एक तरह से भूले हुए थे. लेकिन उसके साथ स्वप्न जैसे व्यतीत होते दिन क्षणिक ही साबित हुए. अभी सानिध्य का खुमार भी नहीं उतरा था कि वह अलग हो गयी. उन्हें लगा कि जैसे ऊँची पहाड़ी चोटी पर पहुँचने से पहले ही उन्हें एक धक्के में वहाँ से सीधी सड़क पर फेंक दिया गया. विछोह से उबरने के बाद भी कभी-कभी उन्हें यह तक लगने लगता कि अब तक का उनका जीवन अर्थहीन ही रहा. जब वह अपने अतीत से वर्तमान के लगभग बीस बरसों की यात्रा पर गौर करते तो लगता कि मंजिल का कहीं नामों निशान

तक नहीं. जहाँ से शुरू किया था सफर, कदम ताल करते अभी भी वहीं खड़े हैं.

कार्निवाल से लौटने के बाद प्रवीण बावला अपने भीतर बदलाव पा रहे थे. इंतजार के पल भी कितने भरे-भरे होते हैं, वे बार-बार महसूस करते. उन्हें लग रहा था कि टीना और क्रिस्टी ज़रूर आयेंगी. हुआ भी यही. तीसरे हफ्ते ही टीना उनके दफ्तर में हाज़िर हो गयी. उन्होंने अपना वादा पूरा किया और उसे तीन पॉलिसी दिलवाईं और कुछ ही दिनों में भारतीय लोगों के एक उत्सव में सबके एक साथ एकत्रित होने के अवसर और भी लोगों से बात करने का वादा किया. ये शुरुआत थी. फिर तो उनका आपस में मिलना-जुलना शुरू हो गया. हालांकि वे क्रिस्टी को वह अभी काम तो नहीं दिलवा पाये थे, लेकिन उसके लिए कोई ढंग का उचित काम ढूंढने में उन्होंने अपने सभी मित्रों से कह रखा था मानो अपनी बेटी के लिए काम तलाश रहे हों. काम की वैसे इस देश में कोई कमी नहीं, लेकिन वे जैसा काम चाहते थे वह नहीं मिल रहा था. समय की पाबन्दी उन्होंने अपने आप तै कर ली. उन्होंने इस पर मिले दोस्तों के मजाक की भी परवाह नहीं की.

क्रिस्टी अब अक्सर उनके पास ऑफिस में आ जाती. उसके साथ उन्होंने दो तीन बार डिनर भी लिया. एक बार अपने घर भी ले गये. उसके पहनावे के अतिरिक्त उसके खान-पान को देखकर उन्हें आश्चर्य होता. एक दिन खास तौर से उन्होंने उसके लिए एक भारतीय रेस्टोरेंट से समोसे मंगवाये, लेकिन मँगवाने पर बड़ी बात जो हुई वह यह कि उसने उनसे भी अधिक चाव से समोसे खाये. उससे संपर्क हो जाने के बाद उन्हें अपनी लगभग भूल सी गयी भारतीय पाक कला को फिर से जीवित करने का मानो अवसर मिल गया हो. असल में वह उनके बनाये पकवानों को बेहद चाव से और बड़ी आसानी से खाती. कभी-कभी तो इतनी कि जितनी आसानी से वे खुद नहीं खा पाते. धीरे-धीरे भारत और वहाँ की संस्कृति और रहन-सहन और सामाजिक जीवन में उसकी दिलचस्पी बढ़ने लगी. वह इस तरह की बातों में काफी रुचि भी दिखाती.

> टीना और क्रिस्टी के अतीत की पर्तें उघड़ती गयीं. प्रवीण बावला को यह तो पता चल ही गया था कि वह भारतीय पिता की ही सन्तान है, लेकिन उसके जन्मदाता से संबंधित जानकारी नहीं थी.

प्रवीण बावला को लगता वे सही दिशा में जा रहे हैं. एकाध बार जब उन्होंने उससे उसके पिता के संबन्ध में बातें करनी चाही तो उसने ज़रूर अरुचि दिखाई. प्रवीण बावला इसके लिए उचित समय की प्रतीक्षा करने लगे.

प्रतीक्षा अपने आप ही समाप्त हो गयी. उन्होंने शनिवार की एक शाम क्रिस्टी के साथ टीना को भी अपने घर आमंत्रित किया. उस दिन प्रवीण बावला के यहाँ तीन चार भारतीय भी आमंत्रित थे. बीमा के सिलसिले में बात हो जाने के मोह में वह निमंत्रण को अस्वीकार नहीं कर सकी. खाने के बाद कारोबारी बातें करके भारतीय समुदाय के लोग चले गये तो प्रवीण बावला ने उन लोगों से थोड़ा और रुकने का आग्रह किया. टीना मान भी गयी. भारतीय खाने के साथ फिर जो बात आरम्भ हुई तो एकाएक न जाने कैसे बातचीत ने टीना और क्रिस्टी के व्यक्तिगत जीवन का रुख ले लिया. फिर तो मानो प्रवीण बावला की मनचाही मुराद पूरी हो गयी.

टीना और क्रिस्टी के अतीत की पर्तें उघड़ती गयीं. प्रवीण बावला को यह तो पता चल ही गया था कि वह भारतीय पिता की ही सन्तान है, लेकिन उसके जन्मदाता से संबंधित जानकारी नहीं थी. हालाँकि टीना को भी ठीक-ठीक पता नहीं था, लेकिन उसने जो कहानी बतायी उसका सार यह था कि जब क्रिस्टी का अस्तित्व इस संसार में आया यानी की अट्ठारह बरस पहले तब वह अपने शहर में एक होटल में रिसेप्शन पर काम करती थी. भारत से रेलवे के अधिकारियों का एक समूह डेनमार्क किसी शैक्षणिक कार्यक्रम में आया था. दो दिनों के लिए वह लोग उसी कस्बे के उसी होटल में आकर ठहरे, जिसमें टीना काम करती थी. वहीं मुलाकात हुई और गाढ़ी सी मुस्कान के साथ उसने बताया, उसी मुलाकात का नतीजा क्रिस्टी है.

प्रवीण बावला को उसकी इस निर्पेक्षता से आश्चर्य नहीं हुआ, लेकिन उसे लगा कि इस सिलसिले पूछताछ का यह सुअवसर जरूर है. उन्होंने एक पल की देर किये बिना पूछा - उस आदमी की याद आती है?

वह चुप ही रही, लेकिन इस तरह उसके चेहरे की गंभीरता थी कि प्रवीण बावला के लिए यह तै कर पाना आसान नहीं था कि वह उनके भावों की वास्तविकता को समझ लें, फिर भी अनुमान के सहारे उसके मौन को स्वीकृति मानते हुए दुबारा सवाल किया - तो क्या आपने टीना के पिता को इसके संसार में आने के बाद तलाशने की कोशिश नहीं की?

इससे हासिल क्या होने वाला था?

क्यों! एक बेटी को उसके पिता की आवश्यकता नहीं होती है?

वह फिर मौन रही.

उसे ढूंढना चाहिए था!

क्यों?

हालाँकि प्रवीण बावला के मन में उसके प्रश्न के उत्तर में कोई बहुत तर्कपूर्ण प्रश्न नहीं जन्मा, लेकिन उसे क्रिस्टी के द्वारा यह पता चल गया था कि टीना ने अभी तक शादी नहीं की. उसी के बल पर उन्होंने कहा - प्रेम का अस्तित्व संसार के हर हिस्से में है और उसकी वास्तविकता और महत्व को भी नकारा नहीं जा सकता है.

लेकिन जो आप कह रहे हैं वह संभव भी तो नहीं. शायद उसे अब यह सब याद भी न हो. उसका अपना जीवन होगा और अपना संसार, जैसे कि मेरा यहाँ है. और वह संतुष्ट भी होगा. टीना ने यह कहते हुए अपने भावों को छुपाने की बहुत कोशिश की लेकिन उसके स्वर के कम्पन को प्रवीण बावला ने पढ़ लिया.

उन्हें इस कंपन ने न जाने क्यों एक खास आत्मीय संतोष सा प्रदान किया. फिर उन्होंने पूछा- नाम याद है?

टीना ने दिमाग पर ज़ोर लगा कर डेनिश लहजे में जो नाम बताया उससे प्रवीण बावला ने अनुमान लगाया सचिन. सचिन के आगे मातोंडकर और इसी तरह के कर उपनाम वाले नामों के भाव से यह अनुमान लगाने में तनिक भी कठिनाई नहीं हुई कि वह मराठी था.

लगे हाथ उन्होंने क्रिस्टी से पूछ लिया तुम्हें कभी अपने पिता के संबन्ध में जानने की इच्छा हुई?

वह चुप रही.

यह स्वाभाविक है. टीना ने जवाब दिया, लेकिन मैंने इससे इसके पिता से संबन्धित जिज्ञासा से दूर ही रक्खा.

प्रवीण बावला की हिम्मत और बढ़ी तो उन्होंने फिर क्रिस्टी को ही संबोधित करते हुए कहा, क्या अपने पिता के संबन्ध में जानना चाहोगी? मिलना चाहोगी उनसे?

क्रिस्टी मुस्कुरा दी. उसकी माँ ने भी उसका साथ दिया. वह ठीक से समझ नहीं पाये कि उन दोनों ने उसके ऊपर व्यंग्य किया है या कि अपनी इस मुस्कान के द्वारा उसके प्रश्न का हाँ में उत्तर दिया है, लेकिन उन्होंने उसे हाँ में ही लिया. और उत्साहित होते हुए वे भारत की सभ्यता और संस्कृति और वहाँ की जीवन शैली, पारिवारिक संबन्धों की गरमी के संबन्ध में बातें करने लगे. उन्होंने गौर किया तो पाया कि आज तो टीना भी उनकी बातों में खासी रुचि भी प्रदर्शित कर रही है. अब वह क्रिस्टी के प्रति इसी तरह की भावना महसूस करने लगा था जो एक पिता ही महसूस कर सकता है. इसमें दिन-प्रतिदिन गहराई आती जा रही थी.

फिर तो प्रवीण बावला ने पहली फुरसत में अपने बम्बई में रहने वाले भतीजे पंकज से संम्पर्क करके रेलवे में सचिन नाम के मराठी अधिकारी के बारे में जानकारी हासिल करने का अनुरोध किया.

> *क्रिस्टी मुस्कुरा दी. उसकी माँ ने भी उसका साथ दिया. वह ठीक से समझ नहीं पाये कि उन दोनों ने उसके ऊपर व्यंग्य किया है या कि अपनी इस मुस्कान के द्वारा उसके प्रश्न का हाँ में उत्तर दिया है.*

बढ़ते संबंधों की प्रगाढ़ता के बीच एक दिन मुम्बई से पंकज का फोन आया तो पता चला कि पश्चिम रेलवे में सचिन मातोंडकर नाम का एक वरिष्ठ अफसर है और संजोग से उसके एक मित्र का परिचित भी है. यह समाचार पाते ही प्रवीण बावला को मानों मनचाही वस्तु मिल गयी. भतीजे ने उनके संबन्ध में जितनी जानकारी जुटायी जा सकती थी, दे दी थी. परिवार के नाम पर एक बेटा है जो कि उन्हीं के पास मुम्बई में रहकर पढ़ाई कर रहा है. पत्नी से किसी कारण से बनी नहीं तो दोनों अलग हो गये. भतीजे ने साथ ही उनके मुम्बई ठिकाने का फोन नम्बर भी दे दिया था.

यह नम्बर पाकर प्रवीण बावला को लगा कि उन्हें मानों लाटरी का वह नम्बर मिल गया जिसको पाकर कोई भी पहले पुरस्कार का अधिकारी हो जाता. यद्यपि उन्हें हवा में तीर चलाना था, लेकिन उन्होंने तनिक देर नहीं की और तमाम औपचारिकताओं और संकोच को परे धकेलते हुए उसी दिन उन्होंने फोन लगा दिया. सचिन दौरे पर गये हुए थे. उनके बेटे तरुण से बात हुई. पता चला कि वह बाम्बे आर्ट कॉलेज में स्नातक का छात्र है. उसने फोन विदेश से होने के कारण प्रवीण बावला से बात करने में रुचि भी दिखायी, लेकिन उन्होंने उससे कुछ कहना सुनना उचित नहीं समझा और अपना नम्बर उसे दे दिया. उसके पिता के आने का दिन पूछने के बाद फोन रख दिया, लेकिन न जाने उन्हें यह क्यों लगने लगा कि बस अब लक्ष्य सामने ही है.

तीन दिन बाद वह सोच ही रहे थे कि सचिन मातोंडकर से खबर खैरियत ली जाय, तभी आश्चर्यजनक रूप से भारत से आने वाली कॉल बजाय उनके भतीजे के, सचिन मातोंडकर की निकली. चूँकि यह उनके लिए अप्रत्याशित था, इसलिए तुरन्त तो उन्हें समझ में ही नहीं आया कि क्या बात की जाय, लेकिन क्षणांश में ही स्वयं को संयत करके अपना परिचय देने के बाद कहा, सचिन जी! आप शायद डेनमार्क आ चुके हैं?

दिमाग पर ज़ोर देने के बाद संभवतः उन्हें याद आया तो उन्होंने कहा, जी! लगभग बीस बरस पहले मैं वहाँ रेलवे की

उन्नति के लिए तकनीकी कार्यशाला में हिस्सा लेने के लिए गया था.

जी! प्रवीण बावला अब तक अपनी उत्तेजना पर पूरी तरह नियत्रण पा चुके थे. मुझे पता चला था इसीलिए मैंने आप से पूछा. कहते हुए उन्होंने संतुष्टि महसूस की.

फिर सचिन से उनकी बातें चल पड़ीं. सचिन ने उन्हें अपना मोबाइल नम्बर दे दिया था. उन्हीं के साथ उसके बेटे से भी बातें होने लगीं. हालांकि शक की कोई गुंजाइश नहीं थी तब भी वे और कितने दिन अपनी भावनाओं पर नियंत्रण रख सकते थे? एक दिन उन्होंने सचिन से पूछ ही लिया, आपको उस विजिट में किसी डेनिश लड़की की याद है?

पहले तो सचिन समझ ही नहीं पाये कि आखिर प्रवीण बावला जी का आशय क्या है? लेकिन जैसे ही अतीत की स्मृतियों ने ज़ोर मारा तो उन्हें अपने अतीत के वे क्षण याद आये जो उन्होंने टीना के साथ व्यतीत किए थे.

हाँ! शायद टीना नाम था उसका! लेकिन आपको कैसे मालूम?

मुझे और भी बहुत कुछ मालूम है. लेकिन समय आने पर बताऊँगा. प्रवीण बावला ने अपनी उत्तेजना पर नियंत्रण रखते हुए कहा.

लेकिन वे अपनी उत्तेजना बहुत देर तक छिपा नहीं सके और पहली ही फुरसत में टीना को सारी हकीकत बता दी. बज़ाहिर तो टीना ने कोई भाव नहीं प्रकट किया और इस सूचना को बहुत साधरण रूप में लेना चाहा, लेकिन असल में यह समाचार उसके लिए उतना साधारण था नहीं जितना कि उसने दिखाने की कोशिश की. कहा उसने, क्या पता वह व्यक्ति वही हो जो क्रिस्टी का पिता है.

उसका नाम सचिन मातोंडकर था. भारतीय नाम को ले पाना यूरोप के लोगों के लिए कितना मुश्किल होता है इस बात से प्रवीण बावला परिचित थे इसलिए वे जानते थे कि नाम तो संभवतः उसने उस समय भी ठीक से न लिया हो, ऐसे में उसके सहारे उसकी भावनाओं को स्पंदित करने का उनका प्रयास अर्थहीन ही सिद्ध होने वाला था.

उसने उनके अनुमान के विपरीत सिर हिलाते हुए सहमति प्रकट की और बोली शायद उसका नाम ऐसे ही था. कुछ-कुछ ऐसे ही फिर उसने क्षणांश में अपने अतीत की यात्रा की और थोड़ा सा उदास लहजे में बोली, लेकिन अब तो उसका अपना परिवार होगा, अपनी दुनिया!

उसे तो पता भी नहीं होगा कि यहाँ उसकी एक प्यारी सी बेटी भी है. कहकर वे मुस्कुराये.

जवाब में वह भी मुस्कुराई. परन्तु जब यह खबर उन्होंने क्रिस्टी को दी तो वह उत्तेजित सी हो गयी. और बोली, इसका मतलब, मेरे और भी भाई बहन होंगे!

अब प्रवीण बावला को लगा कि अवसर अब आ गया है कि इन लोगों को फोन के द्वारा मिलवा दिया जाय. और फिर उसी समय उन्होंने सचिन का नम्बर डायल किया. संयोग से वे मुम्बई में ही थे. कुशल क्षेम के बाद उन्होंने रिसीवर को क्रिस्टी के हाथों में दे दिया.

हलो कहते हुए उसकी आवाज़ लरज़ गयी. मैं क्रिस्टी! उसने डेनिश में कहा. फिर उसे याद आया कि वह भला डेनिश कैसे समझ सकते हैं, तुरन्त ही उसने अंग्रेज़ी में कहा, आप की... टीना हैनसन की बेटी.

संभवतः वही स्थिति सचिन की भी हुई होगी जो टीना की हो रही थी. क्योंकि टीना काफी देर तक खामोश ही रही. वह खामोशी उसने दूसरी तरफ से बोलने वाले की बात सुनने की नहीं धारण की थी, बल्कि चुप्पी, भाषा का वह रूप थी जिसके अन्दर भावों का समुद्र की लहरों का उफान होता है. उस उफान को प्रवीण बावला ने पढ़ लिया. वे उसे सिर्फ गहरी निगाहों से देखते भर रहे.

उसके बाद सचिन से बातों का सिलसिला टीना से भी चल पड़ा. प्रवीण बावला को यह तो पता नहीं चला कि बातें क्या होती हैं. क्रिस्टी उन्हें बताने की कोशिश भी करती लेकिन वे बस सचिन की सेहत की जानकारी लेकर उसे टाल देते. उन्हें ध्यान दिया तो पता चला कि अब टीना का भी उनके पास पहले की अपेक्षा अधिक फोन आने लगा है और अब वह अपने कारोबार के अतिरिक्त सामान्य बातों के साथ-साथ प्रवीण बावला के घर परिवार और उनके अतीत को भी कुरेदने की कोशिश करती है. वे जरूरत भर ही जवाब देते.

वे उसकी बातों से यह महसूस करने लगे कि जिस अतीत को उसने इस लायक ही नहीं समझा था कि उसके संबन्ध में कभी सोचा जाय वह अब शायद उसके जीवन में हलचल मचा चुका है. प्रवीण बावला यही तो चाहते थे. न सही उनका खुद का, किसी का टूटा घर तो बसे. आश्चर्यजनक रूप से जैसे-

> “अब प्रवीण बावला को लगा कि अवसर अब आ गया है कि इन लोगों को फोन के द्वारा मिलवा दिया जाय. और फिर उसी समय उन्होंने सचिन का नम्बर डायल किया.”

लॉबी से बाहर आते ही टीना सचिन की तरफ लपकी और सचिन टीना की तरफ, लेकिन पास पहुँचकर वह दोनों एक क्षण के लिए ठिठके, तभी सचिन के बेटे ने लपककर टीना को बाहों में भर लिया.

जैसे इन लोगों का रुझान इस तरफ बढ़ता जा रहा था वैसे-वैसे वे उस बोझ से मुक्त होते जा रहे थे जो कि उनके अपने अतीत का बोझ था और जब तब उन्हें कुचलने दबाने लगता था. वे तनावमुक्त होते जा रहे थे.

मिस्टर प्रवीण बावला आज मेरे जीवन का सबसे सुखद दिन है. एक दिन क्रिस्टी ने उत्तेजना भरे स्वर में कहा, मेरा एक भाई है. मम्मी ने कल ही बताया और आज जब मैंने पापा को फोन किया तो उसी ने फोन उठाया.

वह बिना उत्तर दिये उसका मुँह देखते रहे.

मैं एक भारतीय पिता की संतान होने के कारण अपने ऊपर गर्व कर सकती हूँ! उसकी उत्तेजना और बढ़ने लगी, वह एक शिक्षित लड़का है. उसने मुझसे सभ्यता के साथ बात की.

और? प्रवीण बावला ने उसे साँस लेने का अवसर देने के लिए कहा.

उसने अपना पर्सनल नम्बर दिया.

प्रवीण बावला मुस्कुराये. लेकिन उसने बिना उनका ध्यान दिये कहा, फिर पिता जी से भी बात हुई. वे मेरे लिए वहाँ से तोहफे भी भेजेंगे.

तुम क्या अपने पिता जी से मिलना चाहोगी?

उसने अपनी ही रौ में कहा, क्यों नहीं! लेकिन फिर उसे जब अपने जवाब का ख्याल आया तो वह सचेत सी हो गयी और बोली, यह तो मम्मी पर निर्भर करता है. यह उनका निजी मामला है.

लेकिन अब तुम अट्ठारह की हो चुकी हो? प्रवीण बावला ने उसे याद दिलाया.

मुझे उन लोगों से बात करना पसंद है.

बात करना अब टीना को भी सचिन से अच्छा लगने लगा. इतना कि वह अक्सर दो दिन का भी अन्तराल नहीं होने देती. इस बात का टीना ने केवल उनसे संकेत किया लेकिन सचिन मातोंडकर से खुलासा हो गया. और जब से उन्हें अपनी बेटी के होने का पता चला वह बेहद भावुक से उठे, प्रवीण बावला यह महसूस करते तब उस समय वह भी भावुक हो जाते. लेकिन तब वह अपनी भावुकता पर काबू करके अपने अगले कदम के संबन्ध में सोचने लगते. यद्यपि वह अपने संबन्ध में नहीं सोचते, लेकिन वह तब बेहद हल्कापन महसूस करते. कभी-कभी वह ऐसी कल्पना के ताने बाने बुनने लगते और ऊँची उड़ानें भरने लगते.

और एक दिन उनकी कल्पनाओं के सच होने का दिन आ गया. प्रवीण बावला के साथ टीना और क्रिस्टी भारत जाने के लिए एयरपोर्ट पर थीं. क्रिस्टी सलवार कमीज पहने हूबहू नीली आँखों वाली हिन्दुस्तानी लड़की लग रही थी. टीना भी शालीनता की मूर्ति बनी अपने उत्साह को छुपा नहीं पा रही थी. टीना प्रवीण बावला का हाथ दबाते हुए भरे गले से कह रही थी- ये सब आपकी वजह से हो पा रहा है. हम अपनी सोसाइटी में सोच भी नहीं सकते कि कोई बिछड़े हुए परिवार को मिलाने के लिए इतनी तकलीफ उठायेगा. बेशक आपने अपने लिए हमसे कभी कुछ नहीं मांगा है, हमेशा हमे दिया ही है, बट... आई फील, मैं आपके इस अहसान का बदला कैसे चुका पाऊंगी. यू नो उसके बेटे ने मुझे मम्मी कहा. कहते हुए वह अपनी ममता की भावनाओं को छुपा नहीं पा रही थी. प्रवीण बावला क्या जवाब देते और कैसे कहते कि वे इसी शहर में रहने वाली अपनी खुद की बच्ची के सिर पर हाथ फेरने को तरस गये हैं.

क्रिस्टी तो इसी दौरान मानों हिन्दुस्तान के बारे में अब उससे सबकुछ जान लेना चाहती थी. वह बार-बार सचिन के बेटे को याद कर रही थी मानो वह मुंबई एयरपोर्ट पर उसकी प्रतीक्षा में हो.

वास्तव में सचिन अपने बेटे के साथ इन लोगों की मुम्बई के एयरपोर्ट पर प्रतीक्षा कर रहे थे. सचिन मातोंडकर ने उन्हें पहचानने में कोई गलती नहीं की. लॉबी से बाहर आते ही टीना सचिन की तरफ लपकी और सचिन टीना की तरफ, लेकिन पास पहुँचकर वह दोनों एक क्षण के लिए ठिठके, तभी सचिन के बेटे ने लपककर टीना को बाहों में भर लिया. प्रवीण बावला थोड़ा दूर हट गये. उन लोगों को आपस में गले से लगते हुए देखकर उनकी आँखें डबडबा गयीं. जल्दी से उन्होंने चेहरे को साफ करने के बहाने से अपने आँसुओं को पोंछा. जब सचिन के बेटे ने उनके पैरों को झुक कर स्पर्श किया तो उन्हें लगा कि उसी पल वे बेहद हल्के होकर हवा में उड़ने लगे हैं. ■

चंद्र मौलेश्वर प्रसाद

जन्म अप्रैल १९४२. शिक्षा एम.क़ॉम और सीएआईआईबी. भारतीय रिज़र्व बैंक, हैदराबाद से सह-प्रबंधक पद से सेवा निवृत्त. लिखने में रुचि जो कविता, लेख, कथा, समीक्षा आदि के जरिए लगातार जारी है.

संपर्क : यशवंत भवन, अलवाल, सिकंदराबाद-५०००१० आंध्रप्रदेश. ईमेल : cmpershad@yahoo.com

महिला जीवन है एक चक्की

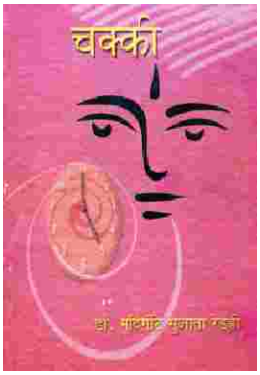

एक संवेदनशील महिला अपने जीवन के इर्द-गिर्द होते पारिवारिक घटनाओं को जब देखती है तो स्त्री पर होने वाले प्रभावों को महसूस करती है. इन घटनाओं में कभी भोगा हुआ यथार्थ होता है तो कभी किसी अन्य महिला से सुनी-सुनाई या फिर पत्र-पत्रिकाओं में पढ़ी घटनाएँ होती हैं. ऐसी ही संवेदनशील महिला जब कलम की धनी हो तो वो इन घटनाओं को कागज़ पर उकेर लेती है. जीवन की इस पिसती चक्की में नारी की इन्हीं कुछ घटनाओं पर आधारित हैं तेलुगु की प्रसिद्ध लेखिका डॉ. मुदिगंटि सुजाता रेड्डी का कहानी संग्रह 'चक्की'. डॉ. सुजाता रेड्डी ने अपनी सीधी-सादी शैली में स्त्री विमर्श पर लिखी बीस कहानियाँ इस पुस्तक में संग्रहित की है. इन कहानियों से प्रभावित होकर डॉ. बी.सत्यनारायण ने इन्हें हिंदी में अनुवाद किया है.

'चक्की' की कहानियों में स्त्री के जीवन से जुड़ी कहानियों में स्त्री-पुरुष संबंधों का जायज़ा भी लिया गया है. शीर्षक कहानी 'चक्की' में उस महिला की दयनीय स्थिति दर्शायी गई है जिसका पति अच्छा कमाता तो है पर परिवार की सुध नहीं लेता, केवल अपने पर सारा धन लुटाता है. परिवार चलाने के लिए कुछ रुपये दे देता है जो दाल-रोटी के लिए भी काफी नहीं होते. दूसरी ओर बढ़ते बच्चों की अपनी फरमाइशें होती हैं जिन्हें उसकी पत्नी अपना पेट काटकर पूरा करती है.

स्त्री विमर्श का दूसरा जवलंत मुद्दा दहेज और अहम् का है. स्नेहलता देवी का पत्र, मोक्ष, न स्त्री स्वातंत्र्यमर्हति जैसी कहानियों में ब्याह और दहेज के मामलों पर प्रकाश डाला गया है. इन कहानियों के माध्यम से कहानीकार ने यह जतलाया है कि आज की नारी अपने पैरों पर खड़े होना चाहती है और अपने माता-पिता का बोझ नहीं बनना चाहती. दूसरी ओर पुरुष की यह प्रवृत्ति होती है कि किसी न किसी समय पत्नी पर यह ताना मारेगा कि तेरे पिता ने क्या दिया... अंत में अंगूठा दिखा दिया ना! (पृ.५९) आज की नारी पढ़-लिख कर अपना कैरियर खुद बनाना चाहती है और आर्थिक रूप से स्वतंत्र रहना चाहती है. यही संदेश देती है कहानी- स्नेहलता देवी का पत्र.

प्रायः यह देखा गया है कि जब पति-पत्नी, दोनों कमाते है तो अहम् का टकराव हो जाता है. पुरुष चाहता है कि पत्नी अपनी कमाई भी पति के हाथ में रख दे और पत्नी अपने आप को आर्थिक रूप से स्वतंत्र रखना चाहती है. लालच और अहम् की इन परिस्थितियों में कभी-कभी स्त्री अनिश्चितता के दोराहे पर खड़ी दीखती है. जैसे 'मोक्ष' कहानी की नायिका का यह सोचना कि ऐसी स्थिति में यदि वह कुछ करने को कहे तो पति की बदनामी! बेइज़्ज़ती! वह जो कहेगा, वही मुझे करना है. नहीं तो उसका पुरुषाहंकार आहत होगा. (पृ.६५)

युवा लड़कियों के लिए सड़कों पर घूम रहे रोड-रोमियो कभी कभी जी का जंजाल बन जाते है. इस संग्रह की कहानियाँ- रौडीइज़्म और मेरा अपराध क्या है? इन्हीं मुद्दों पर लिखी गई हैं. उनकी छेड़छाड़ में सड़क पर ऐसा भी हादसा हो सकता है कि महिला पूछ सकती है- मेरा अपराध क्या है?

> *इन कहानियों के माध्यम से कहानीकार ने यह जतलाया है कि आज की नारी अपने पैरों पर खड़े होना चाहती है और अपने माता-पिता का बोझ नहीं बनना चाहती. दूसरी ओर पुरुष की यह प्रवृत्ति होती है कि किसी न किसी समय पत्नी पर यह ताना मारेगा कि तेरे पिता ने क्या दिया...*

किताब

इसे एक विड़म्बना ही कहा जाएगा कि जब किसी महिला में अपने ही घर-परिवार को छोड़ने की छटपटाहट हो और इसका कारण पुरुष ही नहीं, स्त्री भी हो सकती है. बुढ़ापे में जब बहू का राज होता है तो 'आज़ादी' कथा की सास को अपनी हमउम्र सखियों को घर बुलाने और हँसने बोलने की भी मनाही की जाती है. ऐसे में उसे वृद्धाश्रम की ओर मुँह करना पड़ता है. कुछ ऐसी ही छटपटाहट उस 'बंदिनी' माँ की होती है जो विदेश में अपनी पुत्री की संतान की देखरेख के लिए जाती है और उसे शिशु को चूमने-पुचकारने की भी मनाही होती है.

स्त्री का सबसे कठिन समय वह होता है जब वह विधवा हो जाती है और सामाजिक कार्यक्रमों में उसकी उपस्थिति वर्जिय मानी जाती है. किसी भी शुभकार्य में उसका आगे ठहरना अशुभ माना जाता है. इसी तरह के अंधविश्वासों का विरोध करती कहानियाँ है- उसकी अपनी बेड़ियां और न स्त्री स्वातंत्र्यमर्हति.

स्त्री विमर्श के संदर्भ में लेखिका ने महिला के उस पहलु को उजागर किया है जिसके चलते पुरुष तो ख्याति पाता है परंतु उसके पीछे खड़ी स्त्री के बलिदान को कोई नहीं देख पाता.

उन्होंने इस कहानी संग्रह के प्राक्कथन में कहा भी है- कहते हैं कि प्राचीन भारत में, समाज की बात हो या फिर परिवार की, स्त्री का सर्वत्र आदर होता था, उसे देवी समझा जाता था, उसकी पूजा की जाती थी. किंतु स्त्री को किसी पूजा की आवश्यकता नहीं है. उसकी भी अपनी एक हस्ती है, यह सोचकर ढंग से व्यवहार करें, यही काफ़ी है. लोग उसके अतित्व और उसकी अस्मिता की कद्र करें, यही काफ़ी है. एक ओर स्त्री की पूजा की गई और दूसरी ओर अनादि काल से उसे मोहिनी के रूप में देखा गया.

आशा है कि स्त्री समस्याओं, इच्छाओं और अभिलाषाओं को समझने में ये कहानियाँ सही संदेश देने में सफल होंगी.■

पुस्तक : चक्की (कहानी संग्रह)
लेखिका : डॉ. मुदिगंटि सुजाता रेड्डी (तेलुगु)
अनुवादक : डॉ. बी. सत्यनारायण (हिंदी)
मूल्य : १५० रुपए
प्रकाशक : मिलिंद प्रकाशन
४-३-१७८/२, कंदास्वामी बाग,
सुल्तान बाज़ार, हैदराबाद-५०००९

संतोष भाऊवाला
शिक्षा - बी.एस.सी., साहित्य के साथ संगीत और चित्रकला में रुचि, सम्प्रति- ई-समूहों पर कवितायें और कहानियां लिखना. निवास स्थान - बैंगलोर.
सम्पर्क - santosh.bhauwala@gmail.com

लघुकथा

इज्जत

उसने कस कर अपनी बैग पकड़ी और उस औरत को संदिग्ध निगाह से देखा. रात में भी बैग को सीने से लगाये उसे चिंता सता रही थी कि ये औरत कहीं समझ न गई हो कि उसके पास पांच लाख रुपये हैं जो वह तकादे के बाद हावड़ा एक्सप्रेस से कोलकत्ता लेकर जा रहा था. रिजर्व सीट में आराम से बैठा था. उसी डब्बे में मैले-कुचेले कपड़ों में लिपटी वह औरत करीब दो तीन साल के बच्चे को गोदी में लेकर चढ़ी. उसकी निगाहें थोड़ी सी जगह के जुगाड़ के लिये इधर-उधर दौड़ रही थीं. बर्थ पर थोड़ी सी जगह देख वह और फ़ैल कर बैठ गया, इस आशंका से कि वह बैठ न जाये. पर वह औरत चुपचाप अपने बच्चे को गोद में संभाले, वहीं बर्थ से शरीर टिका कर खड़ी हो गई. थोड़ी देर बाद सर झुका कर वहीं जमीन पर बैठ गई. उसे भय था, रुपये चोरी न हो जाएँ और फिर उसे जाने क्यों उस पर शक हो रहा था. झपकी भी नहीं ले रहा था, कहीं वह बैग उठा कर चम्पत न हो जाये. पर पता नहीं कब नींद ने आ घेरा उसे. कुछ आवाज़ों से तन्द्रा टूटी, देखा अफरा तफरी मची है. तुरंत ध्यान बैग की ओर गया, नहीं दिखा. दिल धड़कना ही बंद हो गया. चारों ओर निस्तब्धता सी छा गई. एकाएक वह जोर से चिल्लाने लगा, उस औरत की ओर इशारा करके, हो न हो, इसी ने मेरा रुपयों भरा बैग चुराया है, ये छोटे लोग ऐसे ही होते हैं. पलक झपकते ही लूट लेते हैं. इससे अच्छा होता, इसे नीचे भी बैठने नहीं देता, बच्चा हाथ में देख कर मुझे दया आ गई. और भी बहुत कुछ कहता जा रहा था, आपे से बाहर होकर. तब लोगों ने उसे झिंझोड़ा... होश आया तो देखा बैग सलामत है, कुछ देर भरोसा नहीं हुआ, फिर दूसरे ही पल घृणा भरी नज़रों से फिर से उसे देखा, जैसे कह रहा हो उसी ने लिया था और उस पर झपटने ही वाला था, लोगों ने बचा लिया, बताया कि कैसे उस औरत के पैर से चोर टकराया और अपनी जान पर खेल कर उसने चोर का पैर जोर से पकड़ कर, बैग चोर के हाथों से बड़ी हिम्मत के साथ छीन लिया. चोर ने अपना पाँव छुड़ाने के लिये जोर से पैर से झटका दिया तो पैर उसके मुँह से जा लगा और उसके मुँह से खून आने लगा. उसने अपना सर पकड़ लिया, कितना गलत सोच रहा था वह, क्या सभी गरीब चोर होते हैं. हमारी सोच ऐसी क्यों हो गई, पछता रहा था, धीरे से सिकुड़ कर सीट पर जगह छोड़ कर कृतज्ञता भरी नज़रों से देख कर खिसक गया. अब उसकी नज़रों में उसके लिये इज्जत थी.■

संगीता स्वरूप

प्रख्यात कवियत्री और समीक्षक. काव्य संग्रह 'उजला आसमां' प्रकाशित. श्रेष्ठ टिप्पणीकार के तौर पर 'लोकसंघर्ष परिकल्पना सम्मान', साहित्य शारदा मंच का 'साहित्य श्री' सम्मान प्राप्त. हिंदी ब्लॉग जगत में सक्रिय. http://geet7553.blogspot.com http://gatika-sangeeta.blogspot.com

सम्पर्क : sangeetaswarup@gmail.com

स्मृतियों में रूस

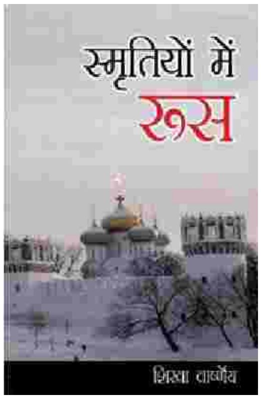

इस पुस्तक की लेखिका हैं शिखा वार्ष्णेय, जिन्होंने रूस के प्रवास के दौरान मिलने वाले अनुभवों को संस्मरण के रूप में लिखा है. शिखा ने अपनी पत्रकारिता की परास्नातक की पढ़ाई मॉस्को यूनिवर्सिटी से की है. वे लिखती हैं : *बारहवीं पास करने के बाद स्कॉलरशिप का इम्तिहान देने गई थी तो नहीं सोचा था कि वाकई चयन हो जायेगा.*

और जब चयन हो गया तो भारतीय माता-पिता के मनोभावों की क्या दशा होती है उसको सुन्दर शैली में बाँधा है, माँ की चिंता, पिता को खुद को ही समझाने का प्रयास और बहन की सोच रोचक बन पड़ा है.

नए देश में सबसे पहले समस्या आती है भाषा की और इसी का खूबसूरती से वर्णन किया है जब उनको अपने बैचमेटस के साथ चाय की तलब लगी. अलग-अलग तरह से भाव भंगिमा बना कर समझाते हुए अंत में पता चलता है कि चाय को रूसी भाषा में भी चाय ही कहते हैं.

रूसी लोग कितने सहायक होते हैं इसकी एक झलक मिलती है जब भाषा सीखने के लिए उन्हें वोरोनेश भेजा गया. और जिस तरह वह एक रूसी लड़की की मदद से यूनिवर्सिटी पहुँच पायीं उसका जीवंत वर्णन पढ़ने को मिलता है. गहन गंभीर घटना को भी चुटीले अंदाज़ में लिखा है

शिखा ने अपनी पुस्तक में मात्र अपने अनुभव नहीं बांटे हैं. अनुभवों के साथ वहाँ की संस्कृति, लोगों के व्यवहार, दर्शनीय स्थल का सूक्ष्म विवरण, उस समय की रूस की आर्थिक व्यवस्था, राजनैतिक गतिविधियों सभी पर अपने विचार प्रस्तुत किये हैं, जिससे पाठकों को रूस के बारे में अच्छी खासी जानकारी हासिल हो जाती है.

उस समय रूस में बदलाव हो रहे थे और उसका असर वहाँ की अर्थव्यवस्था पर भी पड़ रहा था. इसकी झलक भी इस पुस्तक में दिखाई देती है.

वहाँ के दर्शनीय स्थलों की जानकारी काफी प्रचुरता से दी गयी है. इस पुस्तक में रूसी लड़कियों की सुंदरता से ले कर वहाँ के खान-पान पर भी विस्तृत दृष्टि डाली गयी है. यहाँ तक की वहाँ के बाजारों के बारे में भी जानकारी मिलती है.

शिखा ने जहाँ अपने इन संस्मरणों में पाँच साल के पाठ्यक्रम के तहत उनके साथ होने वाली घटनाओं और उनसे प्राप्त अनुभवों को लिखा है वहीं रूस के वृहद दर्शन भी कराये हैं.

इस पुस्तक को पढ़ कर विदेश में पढ़ने वाले विद्यार्थियों को किस-किस कठिनाई से गुज़रना पड़ता है इसका एहसास हुआ. इतनी कम उम्र में अनजान देश और अनजान लोगों के बीच खुद को स्थापित करना, आने वाली हर कठिनाई का सामना करना, भावुक क्षणों में भी दूसरों के सामने कमज़ोर न पड़ना, गलत को स्वीकार न करना और हर हाल में सकारात्मक सोच ले कर आगे बढ़ना. ये कुछ लेखिका की विशेषताएँ हैं जिनका खुलासा ये पुस्तक करती है. पुस्तक पढ़ते हुए मैं विवश हो गयी यह सोचने पर कि कैसे वो वक्त निकाला होगा जब खाने को भी कुछ नहीं मिला और न ही रहने की जगह. प्लैटफार्म पर रहते हुए तीन दिन बिताना वो भी बिना किसी संगी साथी के. इन हालातों से गुज़रते हुए और फिर सब कुछ सामान्य करते हुए कैसा लगा होगा ये बस महसूस ही किया जा सकता है.

हालांकि यह कहा जा सकता है कि पुस्तक की भाषा साहित्यिक न हो कर आम बोलचाल की भाषा है. पर मेरी दृष्टि में यही इसकी विशेषता भी है. पुस्तक की भाषा में मौलिकता है और यह शिखा की मौलिक शैली ही है जो पुस्तक के हर पृष्ठ को रोचक बनाये हुए है. भाषा सरल और प्रवाहमयी है जो पाठक को अंत तक बांधे रखती है. कई जगह चुटीली भाषा का भी प्रयोग है जो गंभीर परेशानी में भी हास्य का पुट दे जाती है.

यह पुस्तक उन सभी लोगों के लिए के लिए और विशेष रूप से विद्यार्थियों के लिए बहुत उपयोगी है जो पहली बार घर से बाहर विदेश में कदम रख कर अपनी पढ़ाई करने जाना चाहते हैं या उस समय के रूस की आर्थिक और राजनैतिक स्थिति के विषय में जिज्ञासा रखते हैं. कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि यह पुस्तक रूस के विषय में काफी जानकारी प्रदान कराती है.■

पुस्तक : **स्मृतियों में रूस**, लेखिका : **शिखा वार्ष्णेय**
प्रकाशक : **डायमंड पब्लिकेशन**, मूल्य : **३०० रुपये**

रामकिशोर पारचा

फिल्म और टीवी के वरिष्ठ पत्रकार और रंगमंच के अभिनेता. फ्रेंच फिल्म समारोहों के सेंसर बोर्ड के भारतीय सदस्य. फ्रांस, इजरायल और भारत में कई फिल्म समारोह आयोजित किये. दिल्ली और जयपुर में होने वाले पहले अन्तर्राष्ट्रीय फिल्म समारोह के निदेशक हैं. अनेकों प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में नियमित कॉलम प्रकाशित.

सम्पर्क : C-77, Krishi Vihar, opposit-Panchsheel Encleve, Near-Greater Kailsh 1, New Delhi-110048
email : 2photorkp65@gmail.com

सिनेमा की बात

चालीस चौरासी (हिंदी एक्शन कामेडी थ्रिलर)

जीवन में हर आदमी बस एक बार अपने सपनों को पूरा करने का एक मौका चाहता है. उसका वो जिन्दगी भर इन्तजार भी करता है. लेकिन हो सकता है कि जब उसे ये मौका मिले तो वो बस उसके सच में उलझ कर रह जाए. वो सच, जो उसे बता दे कि ये मौका उसका तो है पर उसे इसके खतरों से भी उलझना पड़ सकता है और मौत से भी. निर्देशक हृदय शेट्टी की नसीरुद्दीन शाह, केके मेनन, रवि किशन, अतुल कुलकर्णी, श्वेता भारद्वाज, राजेश शर्मा, जाकिर हुसैन, मनोज पाहवा, डी संतोष, नीलिमा उत्तरवर, दिग्विजय रोहिदास, अरबाज खान, मेघा पन्त, प्रदीप काबरा, जहांगीर करकरिया, विनय आप्टे और रीतू जैन की भूमिकाओं वाली फिल्म चालीस चौरासी भी कुछ ऐसे ही सपने देखने वाले पात्रों की एक रात और उनकी वैन नबर चालीस चौरासी की कहानी के गुंजल को दिखाने वाली है.

——

आर्थर क्रिसमस (अंग्रेजी एनीमेशन ड्रामा)

क्रिसमस के मौके पर सांता क्लाज का इंतजार हर बच्चा करता है. उन्हें सांता के उपहारों का इन्तजार होता है और जब वो लाल कपड़ों के साथ सफ़ेद दाढ़ी में उन्हें दिखाई देते है तो उनकी ख़ुशी का ठिकाना नहीं रहता. लेकिन अगर किसी क्रिसमस पर सांता ना आये तो? हो सकता है उनके पास कुछ और काम आ जाये. पर फिर भी क्या उन्हें अपने बच्चों की याद रहती है. बस एक सांता परिवार के ऐसे ही मिशन को दिखाने वाली रोचक कहानी वाली एनीमेशन फिल्म है निर्देशक सराह स्मिथ की आर्थर क्रिसमस. सराह स्मिथ और पीटर बेंहम की लिखी इस फिल्म में जेम्स मकोय, जिम ब्रॉडबेंट, ह्यूज लौरी, बिल नाइ, इमेल्डा स्टंटटन और एश्ले जेंसन ने अपनी आवाज दी है.

—

साड्डा अड्डा (हिंदी ड्रामा)

सपने देखना एक बात है और सपनों को पूरा करना दूसरी. पर जब हम अपने ही सपनों से पूरे करने से डरने लगे तो उन्हें पूरा करना तो दूर हम उनके नजदीक भी नहीं जा सकते. लेकिन यदि हम अपने ही देखे गए सपनों का सामना करने की हिम्मत जुटा लें तो उन्हें पूरा कर एक नया आसमान भी दिया जा सकता है. बस ये अलग बात है कि उन्हें पूरा करने के लिए हम सकारात्मक रहे. इसकी वजह भी है और वो ये कि जिन्दगी जीने के बस दो ही तरीके हैं. एक या तो उसे वैसे चलने दें जैसे चल रही है या फिर जिम्मेदारी उठाने के लिए तैयार रहें. बस यही कहानी है निर्देशक मुआज्जम बेग की करणवीर शर्मा, रोहिन रॉबर्ट, भौमिक सम्पत, कुणाल पंत, रोहित अरोरा, शौर्या चौहान, कहकंशा आर्यन, परिमल अलोक और मरियम जकारिया के अभिनय वाली फिल्म साड्डा अड्डा.

फिल्म क्यों देखें : अगर बिना सपनों की सीमा तय किये उनके पीछे भाग रहे हैं.

फिल्म क्यों न देखें : यदि अपने प्यार का पंचनामा जैसी फ़िल्में देखी हों.

——

घोस्ट (हिंदी हॉरर थ्रिलर)

कहते हैं अतीत कभी नहीं मरता. वो हमेशा जिन्दा रहता है और कभी-कभी तो वो वर्तमान के लिए भी मौत बनकर जीने लगता है. सो निर्देशक पूजा जतिंदर बेदी की शाइनी आहूजा, सयाली भगत, तेज सप्रू, दीपराज राणा, जूलिया ब्लिस, गुलशन राना, संदीप सापोरकर, तबरेज खान और बिज्येता प्रधान के अभिनय वाली फिल्म घोस्ट भी एक ऐसे ही रहस्यमय खतरनाक अतीत की कहानी को दिखाने वाली है.

फिल्म क्यों देखें : अगर भूतिया फिल्मों में रुचि रखते हैं.

फिल्म क्यों न देखें : फिल्म में ऐसा कुछ नहीं जो पहले नहीं देखा हो.

——

टूटिया दिल (हिंदी ड्रामा)

जिन्दगी में सही और गलत क्या होता है. इसे तय करना कई बार हमारे नहीं, हालात के हाथ में होता है और हम सोचते हैं कि हम खुद सब कुछ अपने तरीके तय कर रहे हैं. निर्देशक अमित खन्ना की सुजाना मुखर्जी, सिधांत कपूर, नीखिल सबरवाल, इरिस मैती, अंकित गुप्ता, ज्योति भरद्वाज, चिराग फरमान, और दर्पण मालिक के साथ नविन कौशिक की भूमिकाओं वाली फिल्म टूटिया दिल भी जिन्दगी के एक ऐसे ही अध्याय को रचने वाली है.

फिल्म क्यों देखें : सॉफ्ट प्रेम कथा है.

फिल्म क्यों ना देखें : कुछ नया नहीं है.

> कहते हैं अतीत कभी नहीं मरता. वो हमेशा जिन्दा रहता है और कभी-कभी तो वो वर्तमान के लिए भी मौत बनकर जीने लगता है.

कनाडा में कवि सम्मेलन

विगत दिनों टोरोंटो के हनुमान मंदिर प्रांगण में अविस्मरणीय कवि सम्मेलन आयोजित किया गया जिसमें भारत तथा कनाडा के विशिष्ट कवियों ने भाग लिया. सम्मेलन के मुख्य अतिथि रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु' तथा अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष कनाडा के जाने-माने हिन्दी साहित्यकार डॉ. भारतेन्दु श्रीवास्तव एवं हिन्दी चेतना के प्रधान संपादक श्याम त्रिपाठी थे. संचालन का दायित्व प्रोफेसर देवेन्द्र मिश्र ने संभाला. कार्यक्रम के प्रारंभ में मंदिर की प्रबंधक स्वामी मोहन दास सेवा समिति के शीर्ष अधिकारियों ने शाल भेंट कर कवियों को सम्मानित किया. तदोपरांत डॉ. भारतेन्दु श्रीवास्तव, श्याम त्रिपाठी एवं रामेश्वर काम्बोज ने कविता पाठ किया. विभिन्न भावों तथा रंगों से ओतप्रोत कवितायें सुन कर सभी भाव विभोर हुये.

श्रीमती सुधा मिश्रा ने *मन मंदिर के आंगन मे प्रेम का दीपक जलता है* कविता सुनाने के बाद दूसरी कविता में जीवन के प्रति गंभीर बात कही : *खुशियां इर्द गिर्द हैं बिखरी, बिखरी पास हमारे हैं, किन्तु उन्हें हम देख न पाते नीरस नयन हमारे हैं.*

संदीप त्यागी ने अपनी रचना में कहा : *कभी जंगल में रहता हूं, कभी बस्ती में रहता हूं, हुआ जो दीवाना दिल तेरी मस्ती में रहता हूं.*

शान्ति स्वरूप सूरी ने अर्ज किया : *नशा सा है शराब का हरचंद पी नहीं, ये रंग है शबाब का तो ज़िंदगी नहीं.*

प्रो. सरन घई ने राजनीति पर व्यंग्य किया : *सामने मेरे घर के महल बना कर छोड़ा, मेरे हिस्से का भी सूरज खा कर छोड़ा.*

उमादत्त 'अनजान' ने बड़ी गहरी बात कही : *यदि कोई मन का मीत विरह में मिल जाये, तो तुम मेरा नाम अधर पर मत लाना.*

गोपाल बघेल 'मधु' का निराला अंदाज था : *कितनी सदियां बीत चली हैं, तुम आये ना मैं पहुंचा हूं.*

प्रो. देवेन्द्र मिश्र ने हास्य की सरिता बहाई : *पत्नी चरण सरोज रज जो पति माथ लगाय, जन्म सफल उस का हुआ मन वांछित फल पाय.*

इनके अतिरिक्त श्रीमती राज कश्यप, श्रीमती संतोष शर्मा, श्रीमती कंचन शर्मा, श्रीमती सरोजिनी जोहर तथा सर्वश्री राज महेश्वरी, सुमन सरन सिन्हा, कवि आनंद ने भी सुंदर कविता पाठ किया. कार्यक्रम का समापन टोरोंटो के सुप्रसिद्ध गायक मुकेश चौबे की ग़ज़ल के साथ हुआ. अंत मे सबों ने सुस्वादु प्रीतिभोज का आनंद उठाया.

उत्तरी अमेरिका की चार शीर्ष टेलीविजन चैनलों ने इस कार्यक्रम को रिकार्ड किया. उपस्थित श्रोताओं के अनुसार ये कवि सम्मेलन प्रवासी भारतीयों की भाषा एवं संस्कृति के प्रति निष्ठा की प्रशंसनीय उपलब्धि है तथा हनुमान मंदिर द्वारा ऐसा आयोजन विशेष रूप से सराहनीय है.■

प्रस्तुति : **प्रोफ़ेसर देवेन्द्र मिश्र**

चित्रा मुद्गल को पुश्किन सम्मान

मानवीय सरोकारों की पैरोकार हिन्दी की जानी-मानी लेखिका चित्रा मुदगल को रूस का अंतरराष्ट्रीय पूश्किन सम्मान-२००९ दिए जाने की घोषणा की गई है. रूस के 'भारत मित्र समाज' की ओर से प्रतिवर्ष हिन्दी के एक प्रसिद्ध लेखक-कवि को मास्को में हिन्दी-साहित्य का यह महत्वपूर्ण अंतरराष्ट्रीय सम्मान दिया जाता है. इस क्रम में समकालीन भारतीय लेखकों में अपना विशिष्ट स्थान रखने वाली और कथा-लेखन के प्रति विशेष रूप से समर्पित चित्रा मुदगल को यह सम्मान मास्को में आयोजित होने वाले गरिमापूर्ण कार्यक्रम में दिया जाएगा. उल्लेखनीय है कि पहली बार यह सम्मान किसी महिला लेखिका को मिला है.

मूल रूप से मानवीय संवेदना के पक्ष में खड़ी नज़र आने वाली लेखिका चित्रा मुदगल के अब तक नौ कहानी संग्रह, तीन उपन्यास और संपादन की छह पुस्तकों सहित विविध विधाओं की कुल ४१ पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं. इस भरी-पूरी साहित्यिक सम्पदा वाली लेखिका की अंतरराष्ट्रीय ख्याति का अंदाज़ा इसी बात से लगाया जा सकता है कि उनकी अनेक पुस्तकों का चेक, इतालवी, स्पेनिश, चीनी और नेपाली सहित कई अंतरराष्ट्रीय भाषाओं में अनुवाद किया जा चुका है. मराठी, बंगाली, मलयालम, पंजाबी, कन्नड़, उर्दू, गुजराती, तमिल, असमिया आदि भारतीय भाषाओं में भी उनकी पुस्तकों का अनुवाद बहुत पहले ही हो चुका है.■

अंतर्राष्ट्रीय हिन्दी उत्सव २०१२ सम्पन्न

अंतरराष्ट्रीय हिंदी उत्सव २०१२ का आयोजन १० से १२ जनवरी के बीच दिल्ली में आयोजित किया गया. प्रवासी दुनिया, अक्षरम्, हंसराज कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद तथा विष्णु प्रभाकर जन्म शताब्दी समारोह समिति ने इसमें विशेष योगदान प्रदान किया. उद्घाटन सत्र में हिन्दी साहित्यकारों का जमावड़ा इस बात का गवाह था कि हिन्दी भाषा के उत्थान के लिए तत्परता से काम करने वाले व्यक्तियों की समाज में कमी नहीं है. इस अवसर पर अपनी बेबाक राय और हिन्दी के प्रति समर्पण से सबने प्रतिनिधियों की सहमति बटोरी. उद्घाटन सत्र की शुरुआत डॉ. रत्नाकर पांडेय, सुरेश गोयल, योगेश कर्ण, अशोक चक्रधर, बंश बहादुर सिंह एवं डॉ. वेदप्रताप वैदिक के द्वारा दीप प्रज्वलन के साथ हुई.

फिजी के राजदूत श्री योगेश कर्ण ने कहा कि फिजी में हिंदी के लिए सद्भावपूर्ण वातावरण है. उन्होंने कहा कि भारत में जब आपसी व्यवहार में केवल अंग्रेजी का प्रयोग किया जाता है तो उन्हें कष्ट होता है.

रूस के मदनलाल मधु ने कहा भारत में दिए तले अंधेरा है और अंग्रेजी का हर स्थान पर प्रयोग किया जाता है. अमरीका से आई डॉ. अनिता कपूर ने अमेरिका में हिंदी की स्थिति के बारे में जानकारी दी. डॉ. वेदप्रताप वैदिक ने कहा कि चीनी भाषा को दुनिया की सबसे ज्यादा बोले जानी वाली भाषा मानना गलत है क्योंकि चीनी भाषा के कई रूपप्रचलित हैं. उन्होंने भाषा आंदोलन कमज़ोर पड़ने पर दुख प्रकट किया और कहा कि हिंदी को वैश्विक रूप से स्थापित करने के प्रयासों में अनिल जोशी का योगदान महत्वपूर्ण है. अशोक चक्रधर ने कहा कि हिंदी के भविष्य को लेकर निराश होने की आवश्यकता नहीं है. उन्होने भाषा के तकनीकी और प्रोद्योगकीय पक्षों पर ध्यान देने कीआवश्यकता पर जोर दिया. उन्होंने आकाश कंप्यूटर में हिंदी उपलब्ध ना होने पर चिंता प्रकट की. कार्यक्रम में ब्रिटेन, इटली, अमरीका, कनाडा, बुल्गारिया आदि देशों के विद्वान उपस्थित थे.

तीन दिवसीय अंतरराष्ट्रीय हिंदी उत्सव का सम्मान समारोह के साथ समापन हुआ जिसमें प्रसिद्ध साहित्यकार कुंवर नारायण द्वारा देश-विदेश के हिंदी साहित्यकारों, विद्वानों को सम्मानित किया गया. इनमें भारत में बल्गारिया के राजदूत श्री कोस्तोव, प्रसिद्ध लेखिका चित्रा मुद्गल, प्रसिद्ध शायर शीन काफ निज़ाम, इटली के प्रो. श्याम मनोहर पांडेय, प्रवासी साहित्यकार उषा राजे सक्सेना (ब्रिटेन), शैल अग्रवाल (ब्रिटेन), अनिता कपूर (अमरीका), दीपक मशाल (उतरी आयरलेंड), स्नेह ठाकुर (कनाडा), कैलाश पंत, महेश शर्मा, विमला सहदेव को पुरस्कार प्रदान किया गया.

सम्मान प्रदान करते हुए श्री कुंवर नारायण ने कहा कि भाषा और साहित्य के क्षेत्र में गहन अध्ययन और शोध की आवश्यकता है. सम्मान समारोह के तुरंत पश्चात अंतरराष्ट्रीय कवि सम्मेलन का आयोजन किया गया. इसमें देश के प्रमुख कवियों उदय प्रताप सिंह, सुरेन्द्र शर्मा, शेरजंग गर्ग कुंवर बेचेन, नरेश शांडिल्य, सर्वेश चंदोसवी, आलोक श्रीवास्तव, अल्का सिन्हा और विदेश से उषा राजे सक्सेना, दिव्या माथुर, स्नेह ठाकुर, अनिता कपूर, दीपक मशाल आदि कवियों के काव्य पाठ का सैंकड़ों की संख्या में उपस्थित श्रोताओं ने देर रात तक आनंद लिया.

इससे पूर्व सुबह के सत्रों में वर्ष २०५० में हिंदी और भारतीय भाषाएं विषय में हिंदी के भविष्य के संबंध में व्यापक विचार विमर्श किया गया. असगर वजाहत ने चर्चा की शुरूआत करते हुए. विश्वविद्यालयों, अकादमियों, राजभाषा और गैर सरकारी क्षेत्र में हिंदी की दुर्दशा का विश्लेषण किया. अभय दुबे ने हिंदी और भारतीय भाषाओं को पारिभाषात करते हुए कहा कि हिंदी राष्ट्रभाषा और राजभाषा नहीं अपितु संपर्क भाषा है. प्रभु जोशी ने हिंदी की दुर्दशा के लिए एक गहरे षड्चंत्र का उल्लेख किया. उन्होंने कहा कि इसके लिए सरकारी अधिकारी, मीडिया और मैकालेपुत्र जिम्मेदार हैं. कैलाश पंत ने हिंदी के संबंध में सकारात्मक पक्षों की ओर ध्यान दिलाया. राहुल देव ने विचारोत्तेजक भाषण में सूत्र दिया अपनी भाषा में अपना भविष्य और युवकों को भाषा के संबंध में बड़े बदलाव का आह्वान किया. अनिल जोशी ने इसके लिए संयोजित और संगठित प्रयास करने पर बल दिया. उन्होंने कहा कि हिंदी का संस्थागत फ्रेमवर्क बहुत कमजोर है. ■

प्रस्तुति : वंदना गुप्ता

गर्भनाल की पीडीएफ कॉपी नियमित रूप से मिल रही है. खूबसूरत रूप रेखा, सुन्दर मुख पृष्ठ, दुर्लभ पाठनीय सामग्री से परिपूर्ण इस मासिक पत्रिका ने पांच वर्ष पूरे कर लिए जो कि अपने आप में एक कीर्तिमान है. आशा है आगामी अंकों में पुरातत्व और इतिहास से सम्बंधित स्तम्भ भी सम्मिलित किये जायेंगे, विशेष रूप से भारत की प्राचीन और संपन्न कला, संस्कृति और स्थापत कला से जुड़े हुए आलेखों का संकलन न केवल अनिवासीय भारतीयों के लिए बल्कि भारत में बसे पाठकों के लिए भी रुचिकर हो सकते हैं. ऐसे असंख्य स्थान हैं जिनके पौराणिक और ऐतिहासिक महत्त्व की जानकारी स्थानीय लोगों को भी नहीं है. कुछ तो खँडहर का रूप ले चुके है. 'खंडहर बता रहे है कि इमारतें बुलंद थी', चाहे वो नागपुर का जीरो मील का पत्थर हो, साँची के स्तूप हो या नालंदा का सर्वप्रथम विश्वविद्यालय. इनकी अहमियत विश्व के प्रसिद्ध पर्यटक स्थलों से कम नहीं है. ओझल होते हुए किले, परकोटे, झील, तलाब और भी कई रमणीय स्थल जानकारी के अभाव में विलुप्त हो जायेंगे, जन जाग्रति और पर्याप्त जानकारी इन उपेक्षित स्थलों को दुर्दशा की स्थिति से शायद बचा सके?

उमेश ताम्बी, फिलाडेल्फिया

गर्भनाल का ताजा अंक पूरा पढ़ गई. कहानी, कविताएँ सब ने बहुत प्रभावित किया. आपको इस नेक काम के लिए मेरी बधाई एवं शुभकामनाएँ.

भावना कुँवर, ऑस्ट्रेलिया

गर्भनाल का दिसंबर अंक डाक द्वारा भिजवाने हेतु धन्यवाद. जनवरी अंक भी मिला है. इस अंक में मुद्दा कॉलम के तहत ज्वलंत समस्यायें उठाई गई हैं. आलेख 'किस ओर जा रही है राजभाषा', 'आमजन की भाषा' और 'वोट और सत्ता के चक्रव्यूह में फँसी हिंदी' सोचने पर मजबूर करते हैं, अपनी ही भाषा हमें क्लिष्ट लगती है. सांस्कृतिक अस्मिता कौन चिड़िया है? 'वी लव इंडिया' तो सुनाई देता है न! खुश रहिए. किंतु आमजन की बात है, उसे कैसे विश्वास दिलाया जाए कि हिंदी रोज़गार दिला पाएगी?

फिर भी भारतीय संस्कृति के अनुरूप, उम्मीद है गर्भनाल जैसी अनेक पत्रिकाएँ पाठकों में हिंदी की ज्योति न केवल जलाए रखेंगी बल्कि हिंदी को वोट और सत्ता की राजनीति के चंगुल से बाहर निकालने में पूरा जोर लगा देंगी.

शहीद गणेश शंकर विद्यार्थी जी का लेख आज भी उतना ही प्रासंगिक है. दीपक मशाल की लघु कहानी मार्मिक यथार्थ का चित्रण करती हैं. गौतम सचदेवजी की रम्य रचना अच्छी लगी. कौशलेंद्र प्रपन्न के लेख मृत्यु उत्सव ने गंभीर रूप से अस्वस्थ मेरी माताजी के संभावित किंतु अटल परलोक गमन के लिये मुझे और मजबूत बनाया है.

वंदना मुकेश, यू.के.

गर्भनाल का जनवरी अंक इलेक्ट्रॉनिक और मुद्रित दोनों रूप में मिल गया है. इस बार लिफाफा दो तरफ (सामानांतर सिरे) से खुला था, शुक्र है कि हम तक पहुँच गया, मगर दिसम्बर की मुद्रित प्रति अभी तक नहीं पहुंची है. जनवरी अंक में अमित कुमार लाडी जी कि प्रतिक्रिया पढ़कर अच्छा लगा, शायद मन ने इतराना भी चाहा. सोचती हूँ कभी-कभार लिखते रहना चाहिए.

दीपमाला, अमेरिका

आपकी लगन और जीवट ने गर्भनाल को सुदृढ़ आधार दे दिया है. इसका हर अंक बेहतर होता है. मुद्रित रूप एक और नया आयाम है. हर बार नए लेखकों का जुड़ना इसके आधार के निरंतर विस्तार का सूचक है. देखकर बड़ी प्रसन्नता होती है! नये वर्ष में और नये शिखर छुएँ यही कामना है!

विश्वदेव शर्मा, मुंबई

नया अंक नेट वाला देखा. भा गया. हर बार की तरह इस बार भी स्तरीय रचनाओं और महत्वपूर्ण आलेखों से परिपूर्ण. कवितायें कुछ कमजोर हैं मित्रवर. अन्यथा ना लें. किन्तु प्रवासी साहित्य में यह अभी हो सकता है. संपादन और गेटअप प्रभावित करता है. नेक काम है यह.

संपादक, सृजनगाथा

'गर्भनाल' का जनवरी २०१२ अंक नवीन चतुर्वेदी जी के सौजन्य से प्राप्त हुआ. आश्चर्य और गर्व दोनों हुये कि इतनी सुन्दर पत्रिका हमें उपलब्ध करायी जा रही है. अफसोस भी हुआ कि अभी तक मैं इस पत्रिका के आनन्द से वंचित था. नवीन जी की रचनायें भी बहुत खूबसूरत हैं. नीरज गोस्वामी जी का आलेख, प्राण शर्मा जी की ग़ज़लें और अनिल विद्यालंकार जी का गीता पर आलेख बहुत पसन्द आया. ये विषय व्यक्तिगत अभिरुचि के भी हैं.

मयंक अवस्थी, नागपुर

मैंने आपकी गर्भनाल वेबसाईट पर पढ़ा कि ये दो दोस्तो का रचनात्मक प्रयास है. ये दो दोस्त कौन हैं ये तो लिखा नहीं है. मैंने अपने फेसबुक अकाउन्ट में इस सम्बन्ध में पोस्ट डाली तो मेरे दोस्तों ने सवाल पूछा है कि पत्रिका का नाम - गर्भनाल ही क्यों रखा.

आपकी पत्रिका की सबसे अच्छी बात है कि आप लेख लिखने वालों के ईमेल भी लिखते हैं. मैंने होना न होना के लेखक महेन्द्र जी से बात की ईमेल के जरिए.

बबीता वाधवानी, जयपुर

आपकी बात

'गर्भनाल' की साहित्यिक उत्कृष्टता अचंभित करती है. आप लोग रचनाओं के संयोजन में सावधानी का प्रयोग कर रहे हैं. धन्यवाद कि आपने मेरी पुस्तक 'हेवनलीहेल' पर समीक्षा प्रकशित की.

नीलम कुलश्रेष्ठ

संपादकीय में लोकपाल मुद्दे पर अच्छी चर्चा है. यह सही है कि संसद को अपना काम करने देना चाहिए पर जब सांसद ही जनता की सांसत बन जाय तो सड़क पर उतना ही पड़ता है. अरब देशों के आकाओं की अराजकता वर्षों बाद जैस्मिन बन कर सारे राज्यों पर छा रही है. जब नेता इतिहास से सबक नहीं लेते, तो इतिहास दोहराएगा ही.

हिंदी की दशा और दिशा पर भी आलेखों के माध्यम से अच्छी चर्चा की गई है. हिंदी ब्लाग जगत भाषा के संप्रेषण में एक नया अध्याय जोड़ रही है जिस पर व्यापक और नियमित चर्चा आपकी ई पत्रिका में मिल रही है. साहित्य में ब्लॉग लेखन भविष्य में एक अहम भूमिका निभाएगी, ऐसी आशा की जा सकती है.

चंद्र मौलेश्वर, cmpershad.blogspot.com

गर्भनाल का ताजा अंक पढ़ा. अंक कल्पना से कहीं ज्यादा अच्छा है. बधाई स्वीकार करें. पत्रिका का कवर साधारण होते हुए भी बहुत आकर्षक है.

राजीव शर्मा, जयपुर

गर्भनाल का नया अंक मिला. अभी सरसरी तौर पर ही देखा है. एक बात जो बहुत खटकी वह है वन्दना गुप्ता द्वारा ब्लॉग जगत वाले आलेख में किसी व्यक्ति विशेष को सर्व धर्म समभाव के लिये समर्पित बताना. सम्पादक मंडल को ब्लॉग जगत के किसी व्यक्ति विशेष को महिमा मंडित करने से बचना चाहिए एवं ऐसे लोगों की कारगुजारियों के बारे में थोड़ा नेट पर सर्च करना चाहिये और इस तरह के मंचों की आड़ में छिपाये गये मंतव्यों को समझना चाहिये. आप भी आश्चर्य में पड़ेंगे कि मैंने पत्रिका के बारे में कुछ न कह कर यही मुद्दा उठाया. मेरी दृष्टि में यह बहुत महत्त्वपूर्ण है.

गिरिजेश राव, लखनऊ

गर्भनाल के अंक मिलते ही पढ़ डालती हूँ. रचनाओं का चयन बहुत सटीक होता है, मेरी बधाई.

प्रियंका गुप्ता, कानपुर

दिसम्बर अंक मिला. इस अंक में भी भाषा विषय शासकीय अध्यादेश की परिचर्चा ज़ारी है. दाल सारी काली नहीं है और ऐसा भी नहीं कि शत-प्रतिशत स्वादिष्ट है, फिर भी हर एक को अपना पक्ष रखने की स्वतन्त्रता तो है ही हमारे देश में. डॉ. शिवा भार्गव जी ने भावुकता को शब्दों में पिरो दिया है या शब्दों को भावुकता में, अंत तक पता नहीं चला. प्रभुदयाल मिश्र जी ने यजुर्वेद को हिन्दी कविता में लाकर पाठक वर्ग को उपकृत किया है, साथ ही यह भी कहना चाहूँगा कि उनकी प्रस्तुति अनुवाद अधिक लग रही है तथा कविता कम. जयप्रकाश मानस जी की कविता 'खौफ़' में 'काकभगोड़ा राक्षस' और 'वाल्हेंगिंग वाली बिल्ली' वाले प्रयोग ध्यानाकर्षण करते हैं. राहुल सिंह जी को यहाँ भी राम राम :). प्रगीत कुंअर जी को इतने जबर्दस्त दोहों के लिए विशेष बधाई. आँसू, अनिद्रा, कुचले हुये फूल, जज़्बात, दिल तथा किस किस दोहे की तारीफ करें. बहुत ही शानदार दोहे. अंक पढ़ कर मज़ा आया. अगले अंक का इंतज़ार रहेगा.

नवीन सी चतुर्वेदी, मुम्बई

गर्भनाल के प्रत्येक अंक को पढ़कर जो प्रसन्नता होती है. उसे शब्दों में कह पाना एवं लिख पाना सम्भव नही है. गर्भनाल के ६२वें अंक को आद्योपान्त पढ़ा. कई विचारोत्तेजक निबंध पढ़ने को मिले. गणेश शंकर विद्यार्थी का लेख सुधारकों की भूल पढ़ कर मन को आनन्द मिला कि चलो एक समसामयिक लेख तो इस भागदौड़ भरी जिन्दगी में पढ़ने को मिला. आजकल कविता की तरफ ज्यादा रुझान होने के कारण इस अंक की तमाम कविताओं को पढ़ गया. जेन भंडारी की कविता *मैं वही हूं जो मैं थी* और *काली औरत के सपने* समय और यथार्थ से परिचित कराते नजर आयी. आशा जोगलेकर, डॉ. सुरेश राय, प्राण शर्मा, सत्यनारायण शर्मा कमल, नवीन सी चतुर्वेदी, कमला, देवी नागरानी और डॉ. महेन्द्र कुमार अग्रवाल की रचना पुष्पों से बनी माला को देख कर जो असीम सुख मिला वह अवर्णनीय है. कहानी हृदयहीन की लेखिका ओमलता आखौरी को साधुवाद. इस अद्‌भुत अंक के लिए पुनः धन्यवाद.

अरविन्द कुमार पाठक, बिरलाग्राम, नागदा

Garbhanal is a very good magazine. I will read prvs issue also again thanking for sending me this paper.

Joginder kairon

Your GARBHNAL e magazine is very good & knowledgeable. Reading every issue & getting too much by the way i want to know about "VEDABHYAS" where i must try to find an VEDA Pathshala in india if you can help me (for my child) if possible please let me know. Thanks

Dinesh Joshi, Gandhidham, Kutch

I received front covers of "Garabhnal" of different issues and predicted that your magazine must be carrying very useful material, if possible please arrange to send a copy of the same on following address, so that I may high-light the contents of your magazine to Chandigarhvasis and also contribute some thing in it.

M. M. Khanna, Chandigarh

गर्भनाल के पुराने सभी अंक उपलब्ध हैं :
http://www.garbhanal.com

पत्रिका गर्भनाल

प्रवासी भारतीयों की मासिक पत्रिका

आपको हिंदी बोलनी आती है? तो फिर हिंदी में ही बात करिये. आप कुछ लिखना चाहते हैं? तो फिर हिंदी में लिखिये.

अपनी बोली-बानी में बात करने का मंच है गर्भनाल पत्रिका, जो हर माह नियमित तौर पर आपके ईमेल बॉक्स में पहुँच जाती है. इसे पढ़ें और परिजनों, मित्रों को फॉरवर्ड करें.

पत्रिका की मुद्रित प्रति प्राप्त करने के लिए

आज ही सदस्य बनें

सदस्यता शुल्क	एक वर्ष के लिए
भारत के अंदर	रुपये 950 रजिस्टर्ड डाक से
	रुपये 550 कूरियर से
दूसरे देशों में	रुपये 1800/40 डॉलर (एयर मेल)

साधारण डाक से भेजने की सुविधा नहीं है।

- डी.डी./एम.ओ./चैक 'GARBHANAAL PATRIKA' के नाम से भोपाल में देय हों, जिन्हें 'GARBHANAAL PATRIKA, DXE-23, Minal Residency, J.K. Road, Bhopal-462023 M.P. India' के पते पर भेजा जाना चाहिये।
- चैक द्वारा भुगतान करने पर, भोपाल से बाहर के चैकों पर कृपया सदस्यता शुल्क में 50 रु. का निकासी शुल्क (क्लियरेंस चार्ज) जोड़ कर भेजें।
- चैक द्वारा भुगतान की स्थिति में, 4-6 सप्ताह प्रक्रिया हेतु दें।
- आने वाले अंक की प्राप्ति के लिए कृपया यह निश्चित कर लें कि आपका भुगतान पिछले महीने के प्रथम सप्ताह तक हमारे पास पहुंच जाए।
- कृपया अपना नाम और पता स्पष्ट अक्षरों में जिप/पिन कोड, फोन नं. और ई-मेल आई.डी. के साथ भरें।
- किसी भी डाक की विलंब, परिवहन क्षति या सदस्यता फार्म की किसी गलती के लिए जिम्मेवार नहीं होगा।
- ऑनलाइन सदस्यता शुल्क जमा करने की जानकारी : **GARBHANAAL PATRIKA**, BANK ACCOUNT NO. : **114211023956**, BANK : **DENA BANK**, M.P. NAGAR, BHOPAL (M.P.), IFSC CODE : **BKDNO811142**
- अधिक जानकारी अथवा सहायता के लिए संपर्क करें : garbhanal@ymail.com

यह फार्म भर कर डी.डी., चैक या एम.ओ. के साथ भिजवाएँ

हाँ, मैं चाहता हूँ ☐ नई सदस्यता

☐ 1 वर्ष (कूरियर से) ☐ 1 वर्ष (रजिस्टर्ड डाक से)

______ रुपये के लिए GARBHANAAL PATRIKA के नाम से डी.डी./एम.ओ./चैक नंबर ______ दिनांक ______

बैंक ______ संलग्न है.

नाम : ______ उम्र : ______ व्यवसाय : ______

पता : ______

शहर : ______ राज्य : ______ पिन कोड : ☐☐☐☐☐☐ देश : ______

ईमेल : ______ टेलीफोन : ______ मोबाइल : ______

प्रशासनिक सेवी विशेषांक

वह रौबदार चेहरा जब आपसे मिलता है तो अधिकतर सख्तमिजाज़ ही नज़र आता है. सरकारी सेवा से जुड़े होने की मजबूरियाँ उसे अपने दिल की परतों को खोल कर आपको दिखाने के ज्यादा मौक़ा नहीं देतीं मगर फिर भी ईमानदारीपूर्वक अपने कर्त्तव्य का पालन करते हुए उनकी कलम से जब आदेश के अलावा साहित्यिक रचनाएं निकलती हैं तो वह इस बात की गवाही होती हैं कि हमारे अफसर या बाबू कहे जाने वाले ये चेहरे संवेदनाओं से भरे बेहतरीन इंसान पहले होते हैं.

आपकी चहेती पत्रिका 'गर्भनाल' हिन्दी साहित्यिक पत्रिकाओं के इतिहास में पहली बार चुने हुए साहित्यकार प्रशासनिक अधिकारियों की रचनाओं से सजा 'प्रशासनिक सेवी विशेषांक' लेकर आ रही है.

इस विशेषांक में आप पढ़ेंगे ***सर्वश्री विभूति नारायण, सूरज प्रकाश, अशोक बाजपेयी, अशोक कुमार, पवन सिंह*** और ***महेंद्र भीष्म*** आदि के अलावा अन्य लेखकों की विशिष्ट रचनाएँ. यह विशेषांक निश्चित ही आपके लिए संग्रहनीय होगा. अपनी प्रति जल्द ही आरक्षित करने के लिए हमें आज ही लिखें :

garbhanal@ymail.com